भारत सरकार

भारत

का

विधि आयोग

भा. दं. सं. की धारा 498-क

रिपोर्ट सं. 243

अगस्त, 2012

न्यायमूर्ति पी. वी. रेड्डी
(पूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय)
अध्यक्ष
भारत का विधि आयोग

नई दिल्ली
दूरभा-न : 23015465(नि)
23384475(का)
फैक्स 23384475

30 अगस्त, 2012

प्रिय मंत्री श्री सलमान खुर्शीद जी,

भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क पर विधि आयोग की 243वीं रिपोर्ट संलग्न है । धारा के दुरुपयोग की शिकायतों के परिणामस्वरूप गृह मंत्रालय द्वारा किए गए प्रतिनिर्देश और प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड (एआईआर 2010 एससी 3363) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय की मताभिव्यक्तियों के अनुसरण में वि-नय कोविचारार्थ उठाया गया । क्या इस धारा और दंड प्रक्रिया संहिता के अन्य सहबद्ध उपबंधों में किसी संशोधन की आवश्यकता है और अनुकल्पतः, अभिकथित दुरुपयोग और कुटुम्ब के विघटन को रोकने के लिए कौन से उपाय किए जा सकते हैं, की परीक्षा की गई ।

2. आयोग ने 237वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश को दोहराया कि न्यायालय की अनुज्ञा से अपराध को शमनीय बनाया जाना चाहिए । इसे शमनीय बनाने के पक्ष में जबरदस्त विचार है । यह सुझाव दिया गया कि अनुज्ञा देने के पहले कतिपय पूर्वावधानियां बरती जानी चाहिए । तथापि, आयोग ने यह सिफारिश किया है कि इसे अजमानतीय बना रहना चाहिए । व्यापक सामाजिक हित को ध्यान में रखते हुए, स्वयमेव दुरुपयोग (उस विस्तार जहां तक यह अनुभवाश्रित आकड़ों द्वारा स्थापित नहीं है) इसके प्रमुख वि-नय के उपबंध को निरावृत करने का आधार नहीं होगा ।

3. आयोग ने इंगित किया है कि स्थिति को सुधारने के लिए वृत्तिक सलाहकारों, प्रशिक्षित मध्यस्थों, स्थानीय सम्मानित व्यक्तियों (वृत्तिकों और सेवानिवृत्त कर्मचारियों), आदि के माध्यम से सुलह को प्रभावी बनाने के लिए उठाए जाने वाले कदमों के साथ हिंसा जैसे गंभीर महत्व के मामलों में

ही अभिकथनों की असलियत को सत्यापित करने और गिरफ्तारी का सहारा लेने के लिए गिरफ्तारी और आरंभिक अन्वे-ण से संबंधित कानूनी मार्गदर्शक सिद्धांतों के उचित पालन में बहुत समय लगेगा । धारा 498-क वाले मामलों में गिरफ्तार करने की कानूनी अपेक्षा विहित करने वाली दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 (गिरफ्तारी से संबंधित) में स्प-टता लाने के लिए उपधारा (3) के परिवर्धन की सिफारिश की गई है । प्रतिकर रकम बढ़ाने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 358 के संशोधन की भी सिफारिश की गई है । यह महसूस किया गया है कि धारा 498-क वाले मामलों की मिथ्या शिकायतों के लिए दंड उपबंध करने हेतु पृथक् उपबंध का शामिल किया जाना अपेक्षित नहीं है । संरक्षण उपायों और व्यथित महिलाओं की दी जाने वाली सहायता का भी सुझाव दिया गया है ।

सादर और साभार

ह0/-
(पी. वी. रेड्डी)

श्री सलमान खुर्शीद, संसद-सदस्य
माननीय केन्द्रीय विधि और न्याय मंत्री
शास्त्री भवन
नई दिल्ली ।

भा. दं. सं. की धारा 498-क

वि-नय सूची

क्रम सं.	शी-र्क	पृ-ठ सं.
1	प्रस्तावना	1
2	न्यायिक विनिश्चय	8
3	धारा 498-क के अधीन अभियोजन से संबंधित कुछ आंकड़े	13
4	बहस – पक्ष और विपक्ष	14
5	तिगुनी समस्या	18
6	रा-ट्रीय महिला आयोग का मत	18
7	मोटे तौर पर आयोग का दृ-टिकोण और मत	20
8	अपराध का शमन	22
9	घरेलू हिंसा अधिनियम	24
10	उत्त्र – एक विहंगम दृ-टि	27
11	समस्या का निरूपण और युक्तियुक्त समाधान	29
12	गिरफ्तारी का की शक्ति – संतुलित दृ-टिकोण	30
13	गिरफ्तारी से संबंधित उपबंधों का विश्ले-ण और पुलिस का कर्तव्य	32
14	दुरुपयोग समाप्त करने के लिए कतिपय मार्गदर्शक सिद्धांत/चिरभोग	37
15	गृह मंत्रालय का सुझाव और की जाने वाले अगली कार्रवाई	39
16	उपधारा (3) जोड़कर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 का संशोधन	41
17	दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 358-प्रतिकर सीमा को बढ़ाना	41
17क	दुरुपयोग के लिए दंड – कोई विनिर्दि-ट उपबंध आवश्यक नहीं	42
18	विपदग्रस्त उदासीन महिलाओं की देखभाल करने की राज्य की बाध्यता	42

19	सिफारिशों का संक्षिप्तांश	41
	उपाबंध – 1	47
	उपाबंध - 2	58
	उपाबंध - 3	68
	उपाबंध - 3क	89
	उपाबंध - 3ख	90
	उपाबंध - 3ग	102

भा. दं. सं. की धारा 498-क

1. प्रस्तावना

1.1 विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त अभ्यावेदनों और उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए, गृह सचिव, भारत सरकार ने तारीख 1 सितम्बर, 2009 के अपने अर्द्धशासकीय पत्र द्वारा भारत के विधि आयोग से भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के संशोधन, यदि कोई है, पर सुझाव देने और उक्त उपबंध के अभिकथित दुरुपयोग को रोकने के अन्य उपायों पर विचार करने का अनुरोध किया । इसके पश्चात्, **प्रीति गुप्ता** बनाम **झारखंड राज्य** (2010) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि "विधायिका द्वारा पूरे उपबंध पर फिर से गंभीर विचार करने की आवश्यकता है । यह आम बात है कि काफी शिकायतों में घटना को बढ़ा-चढ़ा कर प्रतिबिम्बित किया जाता है । बहुत काफी मामलों में अति विवक्षा की भी प्रवृत्ति प्रतिबिम्बित होती है । समुचित कदम उठाने के लिए विधि आयोग और केन्द्रीय विधि सचिव को "निर्णय की प्रति" भेजने का निदेश दिया गया । भारत के विधि आयोग ने गहन विचार-विमर्श के पश्चात् परामर्श-पत्र-सह-प्रश्नावली निकाला जो **उपाबंध-1** के रूप में इस रिपोर्ट में उपाबद्ध है ।

1.2 विवाहित महिलाओं को पति या उसके नातेदारों द्वारा क्रूरता से संरक्षण प्रदान करने के लिए व-र्ा 1983 में धारा 498-क शामिल की गई थी । 3 व-र्ा तक दंड और जुर्माना विहित किया गया है । 'क्रूरता' पद को व्यापक अर्थ में परिभाषित किया गया है जिससे कि महिला के शरीर या स्वास्थ्य को शारीरिक या मानसिक अपहानि पहुंचाने और किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की किसी विधिविरुद्ध मांग को पूरा करने के लिए उसे या उसके नातेदारों को प्रपीड़ित करने की दृ-टि से तंग करने के कार्यों में लिप्त होने को सम्मिलित किया जा सके । दहेज के लिए तंग करना धारा के दूसरे भाग की परिधि के भीतर आता है । महिला को आत्महत्या करने वाली स्थिति पैदा करना भी 'क्रूरता' का एक लक्षण है । धारा 498-क के अधीन अपराध संज्ञेय, अशमनीय और गैर-जमानतीय है । धारा को नीचे उद्धृत किया जा रहा है –

498क. किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा उसके प्रति क्रूरता करना – जो कोई, किसी स्त्री का पति या पति का नातेदार होते हुए, ऐसी स्त्री के प्रति क्रूरता करेगा, वह कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

स्प-टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए "क्रूरता" से निम्नलिखित अभिप्रेत है :–

(क) जानबूझकर किया गया कोई आचरण जो ऐसी प्रकृति का है जिससे उस स्त्री को आत्म्हत्या करने के लिए प्रेरित करने की या उस स्त्री के जीवन, अंग या स्वास्थ्य को (जो चाहे मानसिक हो या शारीरिक) गंभीर क्षति या खतरा कारित करने के लिए उसे करने की संभावना है ; या

(ख) किसी स्त्री को तंग करना, जहां उसे या उससे संबंधित किसी व्यक्ति को किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के लिए किसी विधिविरुद्ध मांग को पूरी करने के लिए प्रपीड़ित करने की दृ-टि से या उसके अथवा उससे संबंधित किसी व्यक्ति के ऐसे मांग पूरी करने में असफल रहने के कारण इस प्रकार तंग किया जा रहा है ।

1.3 इस सामुदायिक धारणा पर कि कई सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों के कारण महिलाएं हिंसाग्रस्त हैं या अपने संवैधानिक अधिकारों से वंचित है, आधारित महिलाओं से संबंधित स्वतंत्रता, गरिमा और समान सम्मान की चिंताओं को दूर करने के लिए पिछले दो या तीन दशकों के दौरान कानूनी पुस्तक में कई अधिनियमितियां और उपबंध लाए गए । सार्थक बहस और दृढ़ विश्वास के कारण ये अधिनियमितियां प्रकाश में आई । भां. दं. सं. में धारा 498-क का अंतःस्थापन ऐसा ही एक प्रयास है और यह विवाहित महिला के प्रति पति और उसके नातेदारों के घृणाजनक आचरण को दंडित करती है । दंड प्रक्रिया संहिता के सहबद्ध उपबंधों के साथ मिलकर उपबंध को इस प्रकार अभिकल्पित किया गया है जिससे

निवारण का तत्व प्रदर्शित हो । समय के साथ, मिथ्या अतिशयोक्तिपूर्ण अभिकथनों और पति के कई नातेदारों को फंसाने के माध्यम से धारा के दुरुपायोग की घटनाएं प्रकाश में आ रही हैं । यद्यपि व्यापक शिकायतें हैं और यहां तक कि न्यायपालिका ने बड़े पैमाने पर दुरुपयोग का संज्ञान लिया है फिर भी अभिकथित दुरुपयोग के विस्तार के बारे में अनुभवाश्रित अध्ययन पर आधारित कोई विश्वसनीय आंकड़ा नहीं है । इसके बारे में भिन्न-भिन्न बयान है और उनके द्वारा किए गए दुरुपयोग की प्रतिशतता वास्तविक ठोस अध्ययन के बजाय उनके अनुभव या उनकी बात पर आधारित है ।

2. न्यायिक विनिश्चय

2.1 वर्ष 2010 में विनिश्चित प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य[1] (पूर्वोक्त) वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि विधानमंडल द्वारा उपबंध पर गंभीर रूप से फिर से विचार करने की आवश्यकता है । न्यायालय ने कहा : "यह आम जानकारी का विषय है कि अधिकांश शिकायतों में घटनाओं को बढ़ा-चढ़ाकर बताया जाता है । न्यायालय ने पति और उसके सभी सगे-संबंधियों को फंसाने की आम प्रवृत्ति का उल्लेख किया । उच्चतम न्यायालय ने निर्णय की एक प्रति विधि आयोग और केन्द्रीय सचित को भेजने के लिए रजिस्ट्रार को निदेश दिया जिससे कि समाज के व्यापक हित में समुचित कदम उठाए जा सकें । सुशील कुमार शर्मा बनाम भारत संघ[2] (2005) वाले पूर्व मामले में भी, उच्चतम न्यायालय ने चिंता जताई थी कि कई घटनाओं में धारा 498-क के अधीन शिकायतें व्यक्तिगत दुश्मनी निभाने के दूरस्थ हेतुक से फाइल की जा रही है और यह मत व्यक्त किया : "अतः, विधानमंडल के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि ऐसा रास्ता निकालें कि निरर्थक शिकायत या अभिकथन करने वालों से कैसे ठीक तरह से निपटा जा सके ।" यह भी मत व्यक्त किया गया था कि "उपबंध के दुरुपयोग द्वारा एक नया **विधिक आतंकवाद** पैदा हो सकता है ।"

2.2 देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों ने भी यह उल्लेख किया कि कई

---

[1] ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3363.

[2] (2005) 6 एस. सी. सी. 281.

दृ-टांतों में पति और उसके नातेदारों के विरुद्ध एक जैसे अभिकथन किए जाते हैं और शिकायतें उचित औचित्य के बिना फाइल की जाती हैं । यह मत व्यक्त करते समय, पति और उसके नातेदारों को गिरफ्तार करने के मामले में सतर्कता बरतने की आवश्यकता पर बल दिया गया है कि ऐसे कदम द्वारा सुलह की संभावना बहुत कम और समस्यापरक हो जाती है । कुछ मामलों में, उच्च न्यायालयों द्वारा गिरफ्तारी की शक्ति को विनियमित करने और शीघ्रतम समय पर सुलहकारी प्रयास आरंभ करने के लिए कदम उठाने की आवश्यकता हेतु निदेश दिए गए हैं । इस संदर्भ में, चन्द्रभान बनाम राज्य (जमानत आवेदन पत्र सं. 1627/2008 में तारीख 4.8.2008 का आदेश) वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय का विनिश्चय और ट्रि. रमैय्या बनाम राज्य (2008 की दांडिक मूल याचिका सं. 10896 के 2008 के प्रकीर्ण आवेदन सं. 1 में तारीख 7.7.2008 और 4.8.2008 का आदेश) वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के विनिश्चय का प्रतिनिर्देश किया जा सकता है । पहले वाले ममाले में, यह मत व्यक्त किया गया कि "इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि अधिकांश शिकायतें हल्की लड़ाई के कारण क्षणिक आवेश और अहम झगड़े में फाइल की जाती है । यह भी आम जानकारी का वि-नय है कि उनकी लड़ाई और जारी शत्रुता में निसहाय बच्चे सबसे बुरी तरह से पीड़ित होते हैं ।" पुलिस प्राधिकारियों को निम्नलिखित निदेश दिए गए :

(i) नैमित्तिक रूप से प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज न की जाए ।

(ii) पुलिस का प्रयास होना चाहिए कि परिवाद की सावधानीपूर्वक संवीक्षा करे और तब प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करे ;

(iii) डीसीपी/अपर डीसीपी के पूर्व अनुमोदन के बिना भा. दं. सं. की धारा 498-क/406 के अधीन कोई मामला दर्ज नहीं किया जाए ।

(iv) प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के पहले, सुलह के लिए सभी संभव प्रयास किए जाएं और यदि यह पाया जाता है कि समझौते की कोई संभावना नहीं है तो पहली नजर में शिकायतकर्ता को स्त्रीधन और दहेज की वापसी सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कदम उठाना चाहिए ।

(v) मुख्य अभियुक्त की गिरफ्तारी गहन अन्वे-ण के पश्चात्

और एसीपी/डीसीपी के पूर्व अनुमोदन से ही की जानी चाहिए ।

(vi) ससुराल वाले संबंधियों जैसे संस्पर्शी अभियुक्त के मामले में, डीसीपी का पूर्व अनुमोदन फाइल पर लिया जाए ।"

अन्य दिए गए निदेश इस प्रकार हैं :–

"दिल्ली विधिक सेवा प्राधिकरण, रा-ट्रीय महिला आयोग, स्वयंसेवी संगठन और महिलाओं के उन्नयन के लिए कार्य कर रहे कार्यकर्ताओं को उन्हें सुलह सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल में एक डेस्क लगाना चाहिए जिससे राज्य तंत्र के गतिमान होने के पूर्व उसी प्रक्रम पर ही मामले को सौहार्द्रपूर्ण ढंग से सुलझा लिया जाए । जब मामला न्यायालय पहुंचता है तो भी पुनर्मिलन और सुलह की संभावना का पता लगाने की आवश्यकता पर बल दिया जाए । अंत में, यह मत व्यक्त किया गया कि इन मामलों में स्वयं पक्षकारों को किसी बाहरी अभिकरण के हस्तक्षेप के बिना सुलहकारी दृ-टिकोण अपनाना चाहिए ।

2.3 स्वप्रेरणा से न्यायालय द्वारा बनाम केन्द्रीय अन्वे-ण ब्यूरो, 109 (2003) दिल्ली ला टाइम्स 494 में प्रकाशित वाले मामले के दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व निर्णय में गिरफ्तारी, जमानत की मंजूरी, सुलह आदि के बारे में पुलिस और न्यायालयों को इसी प्रकार के निदेश जारी किए गए थे । यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय द्वारा जारी इन प्रक्रियागत निदेशों का पालन दिल्ली में किया जा रहा है जैसा दिल्ली के वरि-ठ पुलिस अधिकारी द्वारा बताया गया, फिर भी कुछ अधिवक्ताओं के बयान के अनुसार, पुलिस थाना स्तर पर अतिक्रमण के कई दृ-टांत सामने आए हैं । यह उल्लेखनीय है कि चन्द्रभान (पूर्वोक्त) वाले मामले के आदेश के पश्चात् दिल्ली पुलिस आयुक्त ने उच्चतम न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय के अधिकथनानुसार "गिरफ्तारी के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत" 2008 का स्थायी आदेश सं. 330 जारी किया । धारा 498-क से सुसंगत निर्णयों और उसमें दिए गए निदेशों का स्थायी आदेश में प्रतिनिर्देश किया गया । यह पता चला है कि पति/नातेदारों को गिरफ्तार करने के पूर्व एसीपी/डीसीपी स्तर के अधिकारियों की अनुज्ञा अभिप्राप्त करने के व्यवहार का दिल्ली में पालन किया जा रहा है । इस आयोग के अध्यक्ष को प्राप्त सूचना के अनुसार कई राज्यों में कोई क्रमबद्ध मार्गदर्शक सिद्धांत नहीं हैं और उच्च

अधिकारियों द्वारा इस तरह के मामलों की कोई नियमित मानीटरिंग की व्यवस्था नहीं है । तदर्थ पद्धति और प्रक्रियाएं प्रचलित हैं ।

2.4 टी आर. रमैय्या वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निदेश इस प्रकार हैं :

(i) दहेज मृत्यु/आत्महत्या और गंभीर प्रकृति के मामलों के सिवाय, सभी महिला पुलिस थानों के थानाधिकारी संबद्ध दहेज परिवीक्षा अधिकारी के अनुमोदन पर ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करें ।

(ii) अनुभवी सामाजिक कार्यकर्ताओं/मध्यस्थों को नामित किया जाए और दहेज परिवीक्षा अधिकारियों के साथ सभी महिला पुलिस थाने के उसी परिसर में रखा जाए ।

(iii) विशे-ाकर वैवाहिक विवादों में वृद्ध, अशक्त, रोगी व्यक्तियों और अवयस्कों की गिरफ्तारी सभी महिला पुलिस थानों के थानाधिकारियों द्वारा नही की जाएगी ।

(iv) यदि अन्वे-ाण के दौरान गिरफ्तारी आवश्यक हो तो लेखबद्ध रूप से कारण अभिलिखित करते हुए अग्रेि-ात कर संबद्ध पुलिस अधीक्षक से मंजूरी अभिप्राप्त की जाए ।

(v) संबद्ध मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतिम रिपोर्ट फाइल करने के पश्चात् गिरफ्तारी की जा सकती है यदि अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा सहयोग किया जा रहा है और समुचित आदेश (गैर-जमानती वारंट) की प्राप्ति के पश्चात् फरार होने की आशका है ।

(vi) प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के दर्ज होने की तारीख से 30 दिनों की अवधि के भीतर आरोपपत्र फाइल किया जाए और असफलता की दशा में असफलता के लिए कारण बताते हुए अधिकारितागत मजिस्ट्रेट से समय के विस्तार की मांग की जाएगी ।

(vii) सभी महिला पुलिस थानों पर मामलों से निपटते समय लाठी/शारीरिक बल सहित किसी हथियार का उपयोग नहीं किया जाए ।

(viii) परिवादियों/पीड़ितो को समुचित सुरक्षा/सरकारी मकान में आवास की सुविधा दी जाए और बच्चों के हित पर ध्यान रखा जाए ।

(ix) जंगम और स्थावर स्त्रीधन संपत्तियों को पीड़ितों/परिवादियों को यथाशीघ्र लौटाया जाए और उनकी शिकायतों के तत्काल प्रतितो-न के लिए विधिक सेवा प्राधिकरण के माध्यम से उनके लिए विधिक सहायता की व्यवस्था की जाए ।"

2.5 इस आदेश के अनुसरण में, तमिलनाडु के पुलिस महानिदेशक ने इस आशय का परिपत्र जारी किया कि न्यायालय के उक्त आदेशों का कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए । तारीख 4.8.2008 के अगले आदेश में न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि जब अन्वे-नक अधिकारी अभियुक्त का रिमांड चाहता है तो मजिस्ट्रेट को उसकी आवश्यकता की परीक्षा करनी चाहिए और अन्वे-नक अधिकारी के मात्र अनुरोध पर यंत्रवत रिमांड का आदेश नहीं कर देना चाहिए । मजिस्ट्रेट का यह समाधान होना चाहिए कि रिमांड देने के पर्याप्त आधार विद्यमान हैं । इसके अतिरिक्त, न्यायालय ने पुलिस थानों में लंबी पंचायत करने के व्यवहार की निन्दा की ।

2.6 उपरोक्त निर्दि-ट दिल्ली और मद्रास उच्च न्यायालय के विनिश्चयों के संबंध में कुछ टिप्पणियां हैं जिनका उल्लेख करना हम उचित समझते हैं । विनिश्चय विहित विभिन्न अर्हताओं और निर्बंधनों के कारण अपराध को व्यवहार्यतः जमानतीय बनाते हैं । मद्रास उच्च न्यायालय का विनिश्चय इस विस्तार तक उल्लेख करता है कि मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतिम रिपोर्ट फाइल करने के पश्चात् और मजिस्ट्रेट द्वारा जारी गैर-जमानतीय वारंट के आधार पर ही गिरफ्तारी की जा सकती है । क्या वैवाहिक समस्याओं वाले मामलों में गिरफ्तारी की शक्ति को निर्बंधित करने की समीचीनता और अनुभव पर आधारित यह न्यायिक विधि निर्माण विधितः उचित है, यह पहला प्रश्न उद्भूत होता है । दूसरा, क्या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के दर्ज किए जाने को कुछ समय के लिए अर्थात् आरंभिक अन्वे-ण और सुलह प्रक्रिया पूरी होने तक आस्थगित किया जा सकता है, दूसरा मुद्दा है । भजनलाल[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया गया, अतः यह सुस्प-टतः साफ है कि संज्ञेय अपराध प्रकट करने वाली कोई जानकारी संहिता की धारा 154(1) की अपेक्षाओं को पूरा करती हुई थाना प्रभारी अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की जाती है तो उक्त पुलिस अधिकारी के पास

[1] हरियाणा राज्य बनाम भजनलाल, ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 604.

उसके सार को विहित प्ररूप में अर्थात् ऐसी जानकारी के आधार पर मामले को दर्ज करने के सिवाय और कोई विकल्प नहीं रह जाता है ।"

2.7 तथापि, ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[1] के हाल ही के मामले में इस प्रश्न पर कि क्या पुलिस अधिकारी तब प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के लिए आबद्ध है जब संज्ञेय अपराध बनता है या उसके पास प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के पूर्व किसी प्रकार की प्रारंभिक जांच करने का विवेकाधिकार है,मतों के प्रकट बिखराव को ध्यान में रखते हुए मामला उच्चतम न्यायालय की वृहत्तर न्यायपीठ को निर्दि-ट किया गया है । अतः, इस बिन्दु पर विधिक की स्थिति अनिश्चित है । इस स्थिति में संबद्ध उच्च न्यायालयों द्वारा अधिकथित विधि या जारी निदेशों का तब तक पालन किया जाना चाहिए जब तक उच्चतम न्यायालय द्वारा विधि स्थिर नहीं कर दी जाती । आयोग के विद्वान् सदस्य श्री अमरजीत संह ने सुझाव दिया कि शारीरिक हिंसा के मामलों के सिवाय, कोई जांच किए बिना तत्काल प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किए जाने की आवश्यकता नहीं है । क्या विनिर्दि-टतः धारा 498-क के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के प्रतिनिर्देश से इस बाबत विधायी उपबंध होना चाहिए, ऐसा वि-नय है जिस पर उपरोक्त मामले में सुसंगत धाराओं पर उच्चतम न्यायालय के निर्वचन के पश्चात् फिर से विचार किया जा सकता है ।

3. धारा 498-क के अधीन अभियोजन से संबंधित कुछ आंकड़े

3.1 न्यायालयों द्वारा उल्लिखित अति-विवक्षा की शिकायत की बात धारा 498-क के अधीन मामलों के सांख्यिकीय आंकड़े से उद्भूत हुई । माननीय उच्च न्यायालयों से (वर्-ा 2011 के दौरान) प्राप्त जानकारियों के अनुसार भा. दं. सं. के अधीन 3,40,555 मामले 2010 के अंत तक विभिन्न न्यायालयों में विचारार्थ लंबित थे । इन मामलों में कुल 9,38,809 अभियुक्त फंसे थे । इसमें पंजाब और हरियाणा (आंकड़ा उपलब्ध नहीं) से संबंधित मामले सम्मिलित नहीं है । पति के नातेदारों के फंसाए जाने को अधिकांश विनिश्चित मामलों में अन्यायोचित पाया गया । ऐसी स्थिति में, यह प्रतीत होता है कि विशे-ाकर ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली समाज की गरीब वर्ग की महिलाएं मुश्किल से उपबंध का सहारा लेती है, यद्यपि वे

[1] ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 1515.

सबसे बुरी तरह से प्रभावित हैं । तथापि, दिल्ली पुलिस अधिकारियों जिनसे आयोग ने संपर्क किया, के अनुसार गंदी बस्तियों में रहने वाली गरीब पृ-ठभूमि की महिलाएं भी शिकायतें फाइल करने के लिए आगे आ रही हैं ।

3.2 व-र्ा 2011 (सारणी 4) के रा-ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार, धारा 498-क के अधीन 3,39,902 और भा. दं. सं. की धारा 304-ख के अधीन 29,669 मामले व-र्ा की समाप्ति तक विभिन्न न्यायालयों में विचारार्थ लंबित थे । धारा 498-क मामलों में 21.2% और धारा 304-ख मामलों में 35.8% दो-नसिद्धि दर है । व-र्ा 2011 में धारा 498-क के अधीन रिपोर्ट किए गए मामलों की संख्या 99,135 और पूर्ववर्ती दो व-र्ाों के दौरान, इनकी संख्या 94,041 और 89,546 थीं । इस प्रकार, प्रत्येक व-र्ा रिपोर्ट किए गए मामलों में थोड़ी वृद्धि (लगभग 5%) है । यथापूर्वोक्त, कई मामलों की रिपोर्ट ही नहीं होती । अतः, रिपोर्ट किए गए घटनाओं से संबंधित आंकड़े राज्यों में अपराधों की वास्तविक घटनाओं की विश्वसनीय तुलनात्मक सूचना प्रदान नहीं करते । उदाहरणार्थ, धारा 498-क के अधीन रिपोर्ट की गई घटनाओं की शेयर प्रतिशतता अन्य शहरों की तुलना में दिल्ली में दूसरी सर्वाधिक है । यह इस कारण हो सकता है क्योंकि रिपोर्ट किए जाने की प्रतिशतता प्रकटतः अधिक है । व-र्ा 2009-11 के दौरान (धारा 304-ख के अधीन) रिपोर्ट किए गए दहेज मृत्यु मामलों की संख्या क्रमशः 8383, 8391 और 8618 है । एक ऐसा दृ-टिकोण है कि यदि धारा 498-क के अधीन अपराध को जमानतीय या असंज्ञेय बनाया जाता है तो यह विवाहित महिलाओं पर होने वाली क्रूरता के विरुद्ध निवारक क्षमता को खो देगा और दहेज मृत्यु में वृद्धि हो सकती है ।

3.3 यथापूर्वोल्लिखित, धारा 498-क के अधीन मामलों की बाबत दो-नसिद्धि दर बिल्कुल कम-यह लगभग 20% है । यह पता चला है कि न्यायालय के बाहर समझौते जैसी पश्चातवर्ती घटनाओं के कारण, परिवादी महिलाएं अभियोजन को उसके तार्किक नि-कर्ा तक पहुंचाने में रुचि नहीं दिखातीं । इसके अतिरिक्त, अप्रभावी अन्वे-ाण को भी कम दो-नसिद्धि दर का एक कारण माना जाता है ।

4. तर्क : पक्ष और विपक्ष

4.1 उपयुक्त संशोधनों द्वारा धारा 498-क की कठोरता को दूर करने के

तर्क (जिसका समर्थन न्यायालय के निर्णय की मताभिव्यक्तियों और आपराधिक न्याय प्रणाली के सुधार पर न्यायमूर्ति मलिमथ समिति की रिपोर्ट से होता है) इस प्रकार है :

> असली उत्पीड़ित महिलाओं की सहायता करने से दूर, यह अप्रिय विधि पति और अन्य लोगों का भयादोहन और तंग करने का एक माध्यम हो गई है ।
>
> **जब एक बार भा. दं. स. की धारा 498क/406 के अधीन पुलिस के पास परिवाद (प्रथम इत्तिला रिपोर्ट) दर्ज हो जाता है तो अभिकथनों के अंतर्भूत तत्वों पर विचार और प्रारंभिक अन्वेषण किए बिना प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित पति और अन्य नातेदारों को गिरफ्तार करने या गिरफ्तार करने की धमकी देने का एक आसान हथियार पुलिस के हाथों लग जाता है । जब कुटुम्ब के किसी सदस्य को गिरफ्तार किया जाता है और जमानत की तत्काल पूर्वापेक्षा के बिना कारागार भेजा जाता है तो सौहार्दपूर्ण सुलह और विवाह को बचाने का अवसर हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है । यह इंगित किया गया है कि सुलह की संभाव्यता से इनकार नही किया जा सकता और पूरी तरह से इसका पता लगाया जाना चाहिए । इस प्रकार पुलिस द्वारा तत्काल गिरफ्तारी प्रतिकूल प्रभाव डालेगी । दीर्घकारी और लम्बे समय तक चलने वाले आपराधिक विचारण कुटुम्ब के संबंधियों के बीच संबंधों में दुश्मनी और कटुता पैदा करते हैं । इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए वैवाहिक मामलों पर विचार करते समय व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए कि यह एक संवेदनशील पारिवारिक समस्या है जिसकी पुलिस की ओर से दंड प्रक्रिया संहिता के संबद्ध उपबंधों के साथ-साथ भा. दं. सं. की धारा 498क के कठोर उपबंधों का फायदा उठाकर अति-उत्साही/बेदर्द कार्रवाईयों द्वारा बिगाड़ने की अनुज्ञा नही दी जाएगी । यह इंगित किया गया है कि दंशन स्वयमेव धारा 498क में नहीं बल्कि दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में इसे अशमनीय और गैर जमानतीय बनाने से है ।**

4.2 दूसरी ओर, यथापूर्वस्थिति बनाए रखने के समर्थन में तर्क संक्षेप में इस प्रकार हैं :

धारा 498क और घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम जैसे अन्य विधान का अधिनियमन विशेष रूप से समाज के ऐसे संवेदनशील वर्ग का संरक्षण प्रदान करने के लिए किया गया है जो क्रूरता और तंग किए जाने के शिकार हैं। इसका सामाजिक प्रयोजन समाप्त हो जाएगा यदि उपबंध की कठोरता को कम किया जाता है। विधि का उपयोग या दुरुपयोग इस उपबंध के लिए विशिष्ट नहीं है। तथापि, विधि की विद्यमान अवसंरचना के भीतर दुरुपयोग कम किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, गृह मंत्रालय राज्य सरकारों को अनावश्यक गिरफ्तारियों से बचने और गिरफ्तारी को लागू होने वाली विधि में अधिकथित प्रक्रियाओं का कड़ाई से पालन करने के लिए सलाहकारी निर्देशञ् जारी कर सकता है। परिवाद की सदाशयता और उन लोगों की दोषिता, जिनके विरुद्ध अभियोग लगाए गए हैं, के संबंध में युक्तियुक्त समाधान पर पहुंचने के पश्चात् ही गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, पहला अनुक्रम लड़ने वाले पति-पत्नी के बीच प्रभावी मेल-मिलाप और मध्यस्थता होना चाहिए और धारा 498क के अधीन आरोप पत्र फाइल करने का अनुक्रम उन्हीं मामलों में अपनाया जाना चाहिए जहां ऐसे प्रयास असफल हो गए हों और प्रथमदृष्टया मामला बनता हो। वृत्तिक रूप से अर्ह सलाहकारों द्वारा ही पक्षकारों को सलाह दी जानी चाहिए न कि पुलिस द्वारा। ऐसे ही विचार अन्य लोगों के साथ-साथ महिला और बाल विकास मंत्रालय द्वारा दोहराए गए हैं।

4.3 इसके अतिरिक्त, यह इंगित किया गया है कि कोई विवाहित महिला निराशा और क्रूरता तथा तंग किए जाने के विरुद्ध कोई अन्य उपचार शेष न रहने के कारण ही अपने पति और अन्य सगे नातेदारों के विरुद्ध परिवाद करने के लिए पुलिस थाने में जाने का जोखिम उठाती है। ऐसी स्थिति में, कुछ मामलों में दुरुपयोग की अति प्रतिक्रिया के बजाय विद्यमान विधि को अपना निजी अनुक्रम अपनाए जाने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए। यह भी मत व्यक्त किया गया है कि जब एक बार आघात करने वाले कुटुम्ब के सदस्यों को परिवाद की भनक लग जाती है तो परिवादी को और यातना पहुंचायी जा सकती है तथा उसके जीवन और स्वतंत्रता

को खतरा हो सकता है यदि पुलिस शीघ्रता और कड़ाई से कार्य नहीं करती । यह दलील दी गई है कि ससुराल में महिलाओं की अप्राकृतिक मृत्यु के बढ़ते अपराधों के कारण धारा 498-क में कोई ढिलाई देने की अपेक्षा नहीं है । दूसरा, मध्यस्थता की दीर्घ प्रक्रिया के दौरान भी, उसे धमकी और यातना मिल सकती है । ऐसी स्थितियों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है ।

5. इस प्रकार, उपबंध के क्रियान्वयन के अनुक्रम में ऐसी विविध समस्याएं जो पैदा होती हैं, निम्न हैं : (क) पुलिस सीधे (प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित) पति और उसके कुटुम्ब के अन्य सदस्यों को भी गिरफ्तार करने के लिए दौड़ती है, (ख) थोड़े या किसी औचित्य के बिना उद्वेग और बदला देने की भावना या गलत सलाह के कारण ससुराल और घर के बाहर भी रहने वाले ससुराल वालों और अन्य नातेदारों को फंसाने की प्रवृत्ति, और (ग) व्यथायुक्त महिला की समस्या के प्रति पुलिस की ओर से व्यावसायिक, संवेदनात्मक और प्रभावयुक्त सोच की कमी ।

6. रा-ट्रीय महिला आयोग का मत

6.1 अर्जी की संसदीय समिति (राज्य सभा) (7.9.2011 को प्रस्तुत रिपोर्ट) के समक्ष सदस्य-सचिव द्वारा प्रस्तुत रा-ट्रीय महिला आयोग के दृ-टिकोण को इस प्रकार संक्षेप में समिति की रिपोर्ट में बताया गया है :

(i) भा. दं. सं. की धारा 498-क, दहेज प्रति-ोध अधिनियम, 1961 और घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 के उपबंधों में जनसामान्य के तत्व हैं और सुमेलित किए जाने तथा समरूपतः क्रियान्वित किए जाने की आवश्यकता है ।

(ii) पुलिस को नागरिकों के संवैधानिक अधिकारों के संरक्षण के हित में यह सुनिश्चित करना चाहिए कि परिवाद की असलियत और यथार्थ तथा गिरफ्तार करने की आवश्यकता के बारे में कुछ अन्वे-ाण करने के पश्चात् युक्तियुक्त समाधान के बिना कोई गिरफ्तारी नहीं की जानी चाहिए ।

(iii) पुलिस थानों में महिला डेस्क और कम से कम जिला स्तर पर

महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल का सृजन करना जो विनिर्दि-ट रूप से महिलाओं द्वारा की गई शिकायतों पर विचार करेगा । जब कोई पत्नी किसी महिला सेल में परिवाद फाइल करने जाती है तो काफी दृढ़ विश्वास और समाधान की अपेक्षा होती है । राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के विधिक सेवा प्राधिकरण, रा-ट्रीय महिला आयोग, गैर-सरकारी संगठन और सामाजिक कार्यकर्ताओं को महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल में महिलाओं को सुलह सेवाएं प्रदान करने के लिए एक डेस्क लगाना चाहिए जिससे की राज्य तंत्र द्वारा वि-नय पर गतिशील होने के पूर्व मामले को उसी प्रक्रम पर सौहार्द्रपूर्ण ढंग से सुलझा लिया जाए ।

(iv) वैवाहिक विवादों के मामले में, लड़ रहे पति/पत्नी और उनके कुटुम्बों के बीच प्रभावी सुलह और मध्यस्थता पहला अनुक्रम होना चाहिए और भा. दं. सं. की धारा 498-क के अधीन आरोप फाइल करने का अनुक्रम ऐसे मामलों में लिया जाना चाहिए जहां ऐसी सुलह प्रक्रिया असफल हो जाए और भा. दं. सं. की धारा 498-क और अन्य संबंधित विधियों के अधीन प्रथमदृ-ट्या मामला प्रतीत होता है ; और

(v) पी डब्ल्यू डी वी ए के अधीन परिकल्पित सलाहकारी तंत्र का क्रियान्वयन राज्य सरकारों द्वारा किया जाना चाहिए और पक्षकारों को सलाह केवल वृत्तिक अर्ह सलाहकारों द्वारा ही दिया जाए न कि पुलिस द्वारा । पुलिस सी ए डब्ल्यू सेल में वृत्तिक सलाहकारों की सूची बनाने पर विचार कर सकती है ।

7. मोटे तौर पर आयोग का दृ-टिकोण और विचार

7.1 आयोग का यह मत है कि दंड प्रक्रिया संहिता के सहबद्ध उपबंधों के साथ धारा दमन और प्रति-उत्पीड़न के उपकरण के रूप में कार्य नहीं करेगी और पुलिस की ओर से अविवेकी और मनमानी कार्रवाई का औजार नहीं बनेगी । इस बात को भुलाया जा सकता कि धारा 498-क आम समाज के विरुद्ध अन्य अपराधों के असमान कौटुम्बिक समस्या और वैवाहिक वैमनस्य की स्थिति पर विचार करती है । तथापि, इसका यह अर्थ नहीं है कि पुलिस को परानुभूति और समझबूझ वाली परिवादी महिला की

शिकायत को महत्व नहीं देना चाहिए या यह कि पुलिस को निक्रिय भूमिका अदा करनी चाहिए । धारा 498-क का उदात्त सामाजिक प्रयोजन है जब कभी हस्तक्षेप करने का अवसर आए तो इसे कानूनी पुस्तक में ही नहीं बना रहना चाहिए । दुरुपयोग या गलत प्रयोग की इसकी क्षमता को अधिक प्रबल बनाकर इसके उद्देश्य और प्रयोजन को व्यर्थ नहीं किया जा सकता । स्वयं दुरुपयोग इसे निरसित करने या समग्र रूप से इसके प्रभाव को छीनने का आधार नहीं हो सकता है । मात्र दुरुपयोग के आधार पर धारा 498-क के पुनर्मूल्यांकन की अपेक्षा नहीं है । इसके अलावा, जब न्यायालयों को कभी-कभी धारा 498-क के अभियोजनों में प्रत्यक्षतः अनुचित आयामों पर विचार करना होता है तो हम ऐसे भारी संख्या वाले मामलों की तरफ से अपनी आंखें बंद नहीं कर सकते जो कई कारणों से अनभियोजित रह जाते हैं ।

7.2 धारा 498-क को वैवाहिक परिधि के भीतर महिलाओं की स्वतंत्रता और गरिमा की हिंसा और हानि के संदर्भ में देखा जाना चाहिए । महिलाओं के जीवन और स्वतंत्रता के लापरवाह और संज्ञाहीन वंचन से अकेले मृदु अनुशास्तियों के माध्यम से प्रभावी रूप से नहीं निपटा जा सकता । यद्यपि अन्य सामाजिक उपायों के माध्यम से समता और गैर-विभेद के मूल्यों की जड़े और गहरी हो सकती हैं फिर भी महिलाओं के संवेदनशील वर्गों को उचित संरक्षण प्रदान करने की आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता है ।

7.3 यद्यपि आयोग अन्यायोचित और निरर्थक परिवादों और अति-विवक्षा के उत्पीड़न को हतोत्साहित करने की आवश्यकता का प्रशंसक है फिर भी, वह यह मत व्यक्त नहीं करना चाहता जो विशे-ाकर इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि महिलाओं के विरुद्ध अत्याचार बढ़ रहे हैं, धारा 498-क के प्रयोजन को विफल करने के विस्तार तक इसकी क्षमता को कम करते हों । पक्ष और विपक्ष पर विचार करते हुए एक संतुलित और समग्र मत बनाया जाना है । निःसंदेह विधि की क्षमता को बनाए रखते हुए दुरुपयोग की स्थिति से निपटने के लिए और विधायी या अन्यथा तार्किक समाधान निकालने की आवश्यकता है । यद्यपि हम कुछ अति महत्वपूर्ण और अभिधानों वाले भिन्न-भिन्न दृ-टिकोणों को स्वीकार करते हैं फिर भी यह उल्लेखनीय है कि ईकाई या प्रतिविलोमतः के रूप में महिलाओं के अधिकारों से जुड़े मूल्य कुटुम्ब से जुड़े मूल्य से कुछ कम नहीं है । समुदाय

के समक्ष यह चुनौती है कि वह दोनों मूल्यों का संवर्धन सुनिश्चित करे । अतः, महिलाओं के अधिकारों और हितों का संरक्षण और संवर्धन करने के लिए आवश्यक दांडिक शास्तिओं के संतुलन पर बल दिया जाना चाहिए ।

7.4 विशे-नकर ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे ऐसे गरीब और निरक्षर लोगों में उपबंधों की भी जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता है जो प्रायः पतियों के पियक्कड़, दुर्व्यवहार और उत्पीड़न की समस्याएं झेलती हैं । महिलाओं से अधिक पुरु-नों को घरों में उत्पीड़न के विरुद्ध महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने वाले दंड और विधि के अन्य उपबंधों से अवगत कराना चाहिए । व्यथित महिलाओं की तालुका और जिला स्तर विधिक सेवा प्राधिकरणों और/या वृत्तिक सलाहकारों वाले विश्वसनीय गैर-सरकारी संगठनों तक सहज पहुंच सुनिश्चित करने के लिए समुचित उपाय किए जाने चाहिए । सही दिशा में जानकारी फैलाने के लिए विस्तृत और सुनियोजित अभियान चलाया जाना चाहिए । इस समय, इस दिशा में प्रयास बहुत कम है । विधिक सेवा प्राधिकरण के प्रतिनिधियों, विधि विद्यार्थियों और सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा कभी-कभार कुछ ग्रामों का दौरा किया जाना ही वर्तमान परिदृश्य है ।

7.5 यह सर्वतोमुखी मत है कि ऐसे अधिवक्ता जिनसे सर्वप्रथम व्यथित महिलाएं या उनके नातेदार मिलते हैं, को उत्तरदायित्व और वस्तुनि-ठता के स्प-ट भाव से कार्य करना चाहिए और वास्तविक समस्या से संगत उपयुक्त सलाह देना चाहिए । नियमनि-ठता से अतिशयोक्तिपूर्ण और सिखाए-पढ़ाए बयानों और पति के नातेदारों को अनावश्यक फंसाने से बचना चाहिए । **विधिक वृत्तिकों की सही सलाह** और मामलों से निपटने वाले पुलिस कर्मचारियों की संवेदनशीलता बहुत महत्वपूर्ण है और यदि ये सही तरह से कार्य करें तो निस्संदेह विधि चक्करदार अनुक्रम नहीं अपनाएगी । दुर्भाग्यवश, यह मजबूत धारणा है कि कुछ अधिवक्ता और पुलिस कार्मिक ऐसी रीति से कार्य करने और समस्या के प्रति दृ-टिकोण रखने में असफल रहे जैसी उनसे नैतिक और विधिक रूप से अपेक्षा थी ।

8. अपराध का शमन

8.1 धारा 498-क के अधीन अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाने के पक्ष में राय की प्रधानता है । यहां तक कि वे (व्यक्ति,

कर्मचारी और संगठन) जो यह कहते हैं कि इसे अजमानतीय बने रहने चाहिए, का भी यह सुझाव है अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा के अधीन रहते हुए अपराध को शमनीय बनाया जाना चाहिए । कुछ राज्य उदाहरणार्थ, आंध्र प्रदेश ने इसे शमनीय बना दिया है । **राम गोपाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य,** 2010 की विशे-न इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6494 (आदेश तारीख 30 जुलाई, 2010) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि धारा 498-क के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जाए । तथापि, इस बिन्दु पर मतों की काफी विभिन्नता है कि क्या इसे जमानतीय अपराध बनाया जाए । कुछ के द्वारा यह अभिवचन किया गया है कि कम से कम पति के नातेदारों और धारा 498-क के स्प-टीकरण के दूसरे भाग खंड (ख) के अधीन आने वाले मामले की बाबत अपराध को जमानतीय बनाया जाए ।

8.2 शमनीयता के संबंध में आयोग ने "भा. दं. सं. अपराधों की शमनीतया" शी-र्क के अधीन एक व्यापक रिपोर्ट (237वीं रिपोर्ट) दी है । आयोग ने यह सिफारिश की है कि धारा 498-क के अधीन अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय अपराध बनाया जाए । आयोग ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में निम्नलिखित उपधारा सम्मिलित किए जाने का सुझाव दिया है :–

> भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध का शमन करने का आवेदन फाइल करने और व्यथित महिला का अधिमानतः महिला न्यायिक अधिकारी या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण के प्रतिनिधि या सलाहकार या घनि-ठसंबंधी की उपस्थिति में चैम्बर में पूछताछ करने के पश्चात् यदि मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाता है कि पक्षकारों के बीच प्रथमदृ-टया स्वैच्छिक और उचित समाधान था तो मजिस्ट्रेट उस आशय को अभिलिखित करेगा और आवेदन की सुनवाई तीन मास या ऐसे अन्य पूर्व तारीख जिसको मजिस्ट्रेट न्यायहित में नियत करे, स्थगित करेगा । स्थगित तारीख को, मजिस्ट्रेट पुनः उसी तरह पीड़ित महिला का साक्षात्कार करेगा और अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् अपराध का शमन करने की अनुज्ञा देने या इनकार करने का अंतिम आदेश पारित करेगा । इस बीच, व्यथित महिला को पर्याप्त आधारों पर अपराध का शमन करने के अपने पूर्व प्रस्ताव को प्रतिसंहृत करने का आवेदन

फाइल करने की स्वतंत्रता होगी ।

8.3 आयोग की रिपोर्ट के सुसंगत भाग को **उपाबंध-2** के रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

8.4 विधि अयोग की 154वीं रिपोर्ट में भी, अपराध को शमनीय बनाने की स्प-ट सिफारिश थी । आपराधिक न्याय सुधार पर न्यायमूर्ति मलिमथ समिति ने यह भी सिफारिश की थी कि इसे शमनीय और जमानतीय बनाया जाए । अर्जियों की समिति (राज्यसभा) ने 7.09.2011 को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में "धारा 498-क के अपराध को शमनीय बनाना" शी-र्क के अधीन पैरा 13.2 में इस प्रकार मत व्यक्त किया है :–

> "समिति यह उल्लेख करती है कि भा. दं. सं. की धारा 498-क के अधीन अपराध निश्चित ही तनावग्रस्त वैवाहिक संबंध का परिणाम है जिसके विभिन्न आधार हो सकते हैं । चूंकि भां. दं. सं. की धारा 498-क के अधीन अपराध होने के विभिन्न कारण हो सकते हैं और विवाह के पक्षकार भिन्न-भिन्न मात्रा तक इसके उत्तरदायी हो सकते हैं इसलिए यह उचित होगा यदि वैवाहिक विवाद के समाधान के लिए समझौते के उपचार को खुला रखा जाए । इस संदर्भ में समिति यह महसूस करती है कि किसी ऐसे वैवाहिक वैमनस्य के मामले में जिसकी परिणति भां. दं. सं. की धारा 498-क के अधीन परिवाद के प्रक्रम तक हो गयी है, यह बेहतर होगा यदि पक्षकारों को समझौता करने का विकल्प हो जिसके पश्चात् वे मुकदमेबाजी में नकारात्मक रूप से अपनी शक्तियां लगाने के बजाय बेहतर भवि-य के लिए अपने जीवन को स्थिर कर सकते है । समिति सरकार को इस बात पर विचार करने की सिफारिश करती है कि क्या भां. द. सं. की धारा 498-क के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जा सकता है ।"

8.5 संसदीय समिति की यं मताभिव्यक्तियां और सिफारिशें 237वीं रिपोर्ट में विधि आयोग द्वारा व्यक्त किए गए मत पर पुनः बल प्रदान करती हैं जो यहां (उपाबंध -2) के रूप में उपाबद्ध है । दंड विधि संशोधन विधेयक 2003 (2005 की रिपोर्ट) पर गृह मंत्रालय की स्थायी समिति से संबंधित विभाग की 111वीं रिपोर्ट में समिति ने स्प-टतः यह सिफारिश की थी कि

धारा 498-क के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जाए । अर्जियों की समिति (राज्यसभा) ने सिफारिश की कि "ठोस रूप से यह सिफारिश करते हुए कि उपबंध के कुप्रभावों और दुगर्तियों को नियंत्रित किया जाए" धारा 498-क के अधीन अपराध को संज्ञेय और अजमानतीय बना रहने दिया जाए । समिति ने आगे यह मत व्यक्त किया : "समिति को यह भय है कि ऐसा करने की असफलता इसे अशमनीय और जमानतीय बनाकर विधि को कमजोर करने के सिवाय और कोई विकल्प नहीं छोड़ेगी ।" दुरुपयोग को रोकने के कतिपय उपाय सुझाव गए हैं जिन्हें समुचित स्थान पर निर्दि-ट किया जाएगा ।

9. घरेलू हिंसा अधिनियम

9.1 **विचारार्थ मुद्दे के संदर्भ में, घरेलू हिंसा से महिला का संरक्षण अधिनियम, 2005 (संक्षेप में पी डी वी अधिनियम) के उपबंधों का निर्देश करना बिल्कुल प्रासंगिक है जो एक सहबद्ध और पूरक विधि है । उक्त अधिनियम का अधिनियमन ऐसी महिलाओं के अधिकारों के अधिक प्रभावी संरक्षण का उपबंध करने के लिए किया गया जो कुटुम्ब के भीतर होने वाली किसी प्रकार की हिंसा के शिकार हैं । वे अधिकार निश्चित ही दांडिक उपबंधों के मिश्रण के साथ सिविल प्रकृति हैं । अधिनियम की धारा 3 घरेलू हिंसा को बहुत व्यापक शब्दों में परिभाषित करती है । यह धारा 498क के अधीन स्त्क्रूरतार् की परिभाषा में वर्णित स्थितियों को समाविष्ट करती है । अधिनियम ने घरेलू हिंसा से ग्रस्त महिलाओं के हितों के सुरक्षोपाय के लिए व्यापक तंत्र अभिकल्पित किया है । अधिनियम ऐसे संरक्षण अधिकारियों की नियुक्ति का व्यादेश करता है जो प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के नियंत्र और पर्यवेक्षण के अधीन होंगे । उक्त अधिकारी मजिस्ट्रेट, पुलिस थाना और सेवा प्रदाताओं को घरेलू घटना की रिपोर्ट भेजेगा । संरक्षण अधिकारियो से परिवादी पीड़िता को प्रभावी सहायता प्रदान करने और मार्गदर्शन देने तथा शरण, चिकित्सा सुविधा, विधिक सहायता आदि उपलब्ध करने और अधिनियम के अधीन एक या अधिक अनुतोष के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष उसकी ओर से आवेदन प्रस्तुत करने का कार्य करने की भी अपेक्षा है । मजिस्ट्रेट से आवेदन प्राप्त करने की तारीख से साधारणतया 3 दिनों के भीतर इसकी सुनवाई करने की अपेक्षा है । मजिस्ट्रेट कार्यवाहियों के किसी प्रक्रम पर प्रत्यर्थी और/या व्यिथत व्यिक्त को सेवा**

प्रदाता से सलाह लेने का निदेश दे सकता है । स्त्रसेवा प्रदातार् ऐसे लोग हैं जो अधिनियम की धारा 10 की अपेक्षाओं के अनुरूप हैं । मजिस्ट्रेट अधिमानत: महिलाओं की सहायता करने के प्रयोजन के लिए कल्याणकारी विशेषज्ञ की सेवाएं भी अर्जित कर सकता है । धारा 18 के अधीन, मजिस्ट्रेट प्रत्यर्थी को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् और प्रथमदृष्टया यह समाधान होने पर कि घरेलू हिंसा हुई है या होने वाली है, प्रत्यर्थी को घरेलू हिंसा का कोई कार्य करने और/या घरेलू हिंसा के सभी कार्यों को सहायता पहुंचाने या दुष्प्रेरित करने से प्रतिषिद्ध करने का संरक्षण आदेश पारित करने के लिए सशक्त है । मजिस्ट्रेट में निवारण आदेश और धनीय अनुतोष मंजूर करने समेत अन्य शक्तियां निहित हैं । धारा 23 इसके अतिरिक्त ऐसे अंतरिम आदेश पारित करने के लिए मजिस्ट्रेट को सशक्त करता है जो वह एकपक्षीय आदेश सहित अन्य आदेश पारित करना ठीक और उचित समझे । प्रत्यर्थी द्वारा संरक्षण आदेश के भंग को एक अपराध माना जाता है जो संज्ञेय और अजमानतीय है और एक वर्ष तक के कारावास से दंडनीय है (धारा 31 द्वारा) । उसी धारा द्वारा, मजिस्ट्रेट भा. दं. स. की धारा 498क और/या दहेज प्रतिषेध अधिनियम के अधीन आरोप विरचित करने के लिए भी सशक्त है । ऐसा संरक्षण अधिकारी जो संरक्षण आदेश के अनुसार अपना कर्तव्य करने में असफल रहता है या उपेक्षा करता है, कारावास से दंडित किए जाने का दायी है (धारा 33 द्वारा) । अधिनियम के उपबंध प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबंधों के पूरक हैं । धारा 498क के अधीन परिवाद फाइल करने का अधिकार विनिर्दिष्टत: अधिनियम की धारा 5 के अधीन संरक्षित है ।

9.2 इस अधिनियम के उपबंधों और धारा 498क के अधीन कार्यवाहियों की परस्पर प्रतिक्रिया दो पहलुओं पर कुछ महत्व ग्रहण कर लेता है : (1) ऐसा परिवादी जिसने धारा 498क के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करवाया है, के द्वितीयक उत्पीड़न को रोकने के लए अंतरिम संरक्षण आदेश पारित करवा कर मजिस्ट्रेट के शीघ्र हस्तक्षेप की ईप्सा करना, (2) यथाशीघ्र अवसर पर मजिस्ट्रेट के पर्यवेक्षण के अधीन सलाह लेने की प्रक्रिया के लिए मार्ग तैयार करना ।

10. उत्तर – एक विहंगम दृ‍ष्टि

10.1 (**उपाबंध -3** में सूचीबद्ध) कुल 474 व्यक्तियों, संगठनों/संस्थाओं

और अधिकारियों ने परामर्शपत्र-सह-प्रश्नावली के संबंध में अपने उत्तर भेजे हैं । इन उत्तरों का व्यापक विश्ले-ण उपाबंध 3 में दिया गया है । कुछ महत्वपूर्ण और विशि-ट उत्तरों का संकलन उपाबंध-3-ख में किया गया है । रजिस्ट्रार और न्यायिक अकादमियों के निदेशक और अधिकारी (उनमें से अधिकांश पुलिस अधिकारी हैं) समेत विभिन्न राज्यों के कुल 244 न्यायिक अधिकारियों और विधि शिक्षा क्षेत्र के सदस्यों ने अपने उत्तर भेजे हैं । उनमें से 100 ने यह सुझाव दिया कि अपराध को जमानतीय बनाया जाए । तथापि, उनमें से 119 ने स्प-ट रूप से यह कहा कि इसे अजमानतीय बना रहने दिया जाए । 24 संगठनों/संस्थाओं में से, 12 ने जमानतीयता का अभिवचन किया और 5 ने यह मत व्यक्त किया कि इसे अजमानतीय बना रहने दिया जाए । व्यक्तिगत लोगों में से अधिकांश ने यह सुझाव दिया है कि इसे जमानतीय बनाया जाए । कुछ ने यह आत्यंतिक मत व्यक्त किया है कि धारा को निरसित कर दिया जाए या इसे लिंग तटस्थ बनाया जाए । प्रतिवेदनकर्ताओं में तीन अनिवासी भारतीय हैं – उनमें से दो व्यक्ति और एक संगठन है । वे इसे पतियों के विरुद्ध कठोर विधि मानते हैं और इस पर पुनर्विचार किया जाए । कई अभ्यावेदनों में यह अभिवचित करते हुए कि परिवादी महिला को ऐसे मिथ्या और निरर्थक परिवादों के लिए जवाबदेह बनाया जाए, मिथ्या परिवादों के कारण कारित संकट और प्रताड़ना की कहानियों का उल्लेख किया गया है । कुछ राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्रों ने भी अपने सुझाव दिए हैं । उनके विचार उपबंध-3ग में संकलित हैं । जो परिवर्तन के पक्ष में नहीं हैं, सहित अधिकांश उत्तर देने वालों ने प्रारंभिक/आरंभिक अन्वे-ण द्वारा तथ्यों के सत्यापन न कि गिरफ्तारी की प्रक्रिया की ओर भागने की आवश्यकता पर बल दिया । भारी संख्या में उत्तर देने वालों ने प्रारंभिक प्रक्रम पर सलाह और मध्यस्थता के माध्यम से सुलह को सुकर बनाने की आवश्यकता पर बल दिया है । उनमें से कई लोगों ने सुलह और मध्यस्थता प्रक्रिया को सुकर बनाने में सहायक के रूप में विधिक सेवा प्राधिकरण की सक्रिय भागीदारी और इस बाबत पुलिस और विधिक सेवा प्राधिकरणों के बीच गहरे समन्वय की आवश्यकता को भी इंगित किया है । यह भी कहा गया है कि विधिक सेवा प्राधिकरण ग्रामीण क्षेत्रों में जानकारी फैलाने में भारी भूमिका निभा सकते हैं ।

10.2 आयोग के अध्यक्ष को आयोग के उपाध्यक्ष और अन्य विद्वान् सदस्यों और अधिकारियों के साथ विभिन्न पंक्ति के न्यायिक अधिकारियों (महिला न्यायाधीशों सहित) से पारस्परिक विचार-विमर्श करने का अवसर

मिला । ऐसे सम्मेलनों में यह आम सहमति थी कि धारा 498-क के अधीन अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाना चाहिए और इसे अजमानतीय बना रहने दिया जाना चाहिए । वहीं उन लोगों ने मिथ्या अभिकथनों या अतिविवक्षा वाले फाइल किए गए परिवादों पर कुछ चिंता व्यक्त की और इस तरह के मामलों में पुलिस से संवेदशनीलता और उत्तरदायित्व से कार्य करने पर बल दिया । इसी प्रकार, ऐसी व्यथित महिलाएं जो पुलिस थाने जाती हैं और जो भावना और भ्रम की दशा में बढा-चढ़ाकर बयानों वाले परिवाद दर्ज कराना चाहती है, की स्थिति को उजागर किया गया है । दिल्ली के वरि-ठ पुलिस अधिकारियों ने यह कहा कि दुरुपयोग की प्रतिशतता नगण्य है और अधिकांश परिवाद बिल्कुल असली है यद्यपि कभी-कभी कुछ बढ़ाचढ़ाकर और असत्य अभिकथन करने के लिए उकसाने की शिकायतें की जाती हैं । उन्होंने ऐसे आचरण के ब्यौरे दिए जो अर्ह सलाहकर्ताओं द्वारा विशे-कर सुलह के मामले में दिल्ली पुलिस द्वारा अपनाए जा रहे हैं । उन लोगों ने अनिवासी भारतीय महिलाओं द्वारा दोहरे परिवाद अर्थात् दिल्ली में धारा 498-क के अधीन और ऐसे देश, जहां वह अंतिम बार अभियुक्त पति के साथ रहीं, में प्रवृत्त घरेलू हिंसा के सुसंगत विधि के अधीन, फाइल कर कारित समस्या को भी उजागर किया है । दुरुपयोग करने के आयाम के संबंध में, कुछ अन्य राज्यों के पुलिस अधिकारियों के अलग-अलग बयान थे । इस प्रश्न पर कि क्या इसे अजमानतीय बना रहने दिया जाए, विशाखापटनम (आं0 प्र0), चेन्नई, औरंगाबाद और बंगलौर के अधिवक्ताओं और न्यायाधीशों (जिन्होंने सम्मलेन में भाग लिया) के बीच विभाजित राय थी । तथापि, पुरु-न और महिला दोनों अधिवक्ताओं ने एक स्वर से कहा कि इसे शमनीय बनाया जाए और समय गंवाए बिना सुलह प्रक्रिया को जारी किया जाए । कई राज्यों में न्यायिक अकादमियों के सम्मेलनों में इसी प्रकार की राय व्यक्त की गई थी ।

11. समस्या का निरुपण और युक्तियुक्त समाधान

11.1 इस बात में कोई संदेह नहीं है कि धारा 498-क के दुरुपयोग की कई घटनाएं हुई हैं । कई मामलों में इसकी न्यायिक अवेक्षा ली गई है । संसदीय समिति ने भी इस पहलू का उल्लेख किया है । विधि आयोग को प्राप्त जानकारी और गृह मंत्रालय को दिए गए अभ्यावेदनों से भी इस तथ्य की पुि-ट होती है । तथापि, दुरुपयोग या कुप्रयोग के विस्तार को प्रकट करने वाला कोई विश्वसनीय आंकड़ा नहीं है । आंकड़ा/जानकारी से यह

प्रकट होता है कि शहरी और शिक्षित महिलाएं इस धारा के अधीन शिकायतें फाइल करने के लिए अधिकांशतः आगे आ रही हैं । आंकड़े से यह भी प्रकट होता है कि अधिकांश मामलों में, पति के अलावा उसके दो नातेदार (विशे-कर ससुराल वाले) अभियोजित किए जा रहे हैं । वहीं, आयोग यह महसूस करता है कि अतिशयोक्तिपूर्ण बयानों और अति विवक्षा से उद्भूत दुरुपयोग स्वयमेव इसे जमानतीय बनाकर उपबंध को कमजोर करने का आधार नहीं होना चाहिए । उचित अन्वे-ण करने के लिए वारंट के बिना गिरफ्तार करने की शक्ति से पुलिस को वंचित करना उपबंध के उद्देश्य को विफल करेगा और हानिकर हो सकेगा । निवारणात्मक तत्व अपरिहार्यतः समाप्त हो जाएगा यदि इसे एक बार जमानतीय बना दिया जाएगा । यह उल्लेखनीय है कि दुरुपयोग स्वयं धारा से ही नहीं उपजता है किन्तु दुरुपयोग की जड़ें असंवेदनशील पुलिस जवाबों और अनुत्तरदायी विधिक सलाह पर आधारित थीं । प्रायः अपने शान्त और वास्तविक सोच से वंचित पीड़ित/परिवादी ऐसे अतिशयोक्तिपूर्ण या भागतः मिथ्या अभिकथनों वाले परिवाद पर बिना सोचे समझे हस्ताक्षर करता है । उसकी जटिलताओं को महसूस करने के समय तक काफी देरी हो चुकी होती है ।

11.2 आयोग के मतानुसार, डी. के. बसु वाले मामले में विकसित गिरफ्तारी को लागू निदेश और कानून अर्थात् दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 5 में समावि-ट विधि का कठोर पालन जैसे उपाय करके दुरुपयोग को कम किया जा सकता है । इस समय पुलिस कई मामलों में या तो अति सक्रिय होती है या उदासीनता का बर्ताव अपनाती है । उनसे सम्यक् संवेदनशीलता और इस अहसास के साथ कार्य करने की प्रत्याशा है कि वे तनावग्रस्त वैवाहिक संबंधों से उद्भूत अभिकथित अपराध पर कार्य कर रहे हैं और सुलह के अवसर को न-ट करने या बच्चों को अपघात कारित करने के लिए कुछ नहीं किया जाना चाहिए । अविलंब प्रारंभिक या अन्यथा अन्वे-ण आरंभ करना वांछनीय है और गिरफ्तारी और ऐसे अन्य कठोर उपायों से सुलह और सौहार्द्रपूर्ण समाधान के दरवाजे बंद नहीं किए जाने चाहिए । विधि आयोग ने पहले ही यह सिफारिश की है कि धारा 498-क के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जाए । मूल स्थिति को यथावत करने न कि मात्र विधि के दंडात्मक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कम से कम यह तो किया जा सकता है । यह उल्लेख किया जा सकता है कि घरेलू हिंसा निवारण अधिनियम के अधीन भी, यथाशीघ्र मजिस्ट्रेट के हस्तक्षेप पर सुलह के लिए उपबंध करते हुए विनिर्दि-ट उपबंध अधिनियमित किया

जाए ।

12. गिरफ्तारी की शक्ति – संतुलित दृ-टिकोण

12.1 निस्संदेह संज्ञेय अपराध में पुलिस अधिकारी के पास निहित गिरफ्तारी की शक्ति दंड उपबंध को प्रवृत्त करने का एक शक्तिशाली हथियार है । तथापि, इस हथियार को इसके म्यान से बिरले ही और यदि आवश्यक हो, तभी प्रयोग किया जाना चाहिए । इसका प्रयोग अन्वे-क अधिकारी के सनक और मनमौजीपन पर नहीं किया जाएगा या ऐसे अपराधों को रोकने के लिए रामबाण के रूप में माना जाए । सर्वप्रथम गिरफ्तार करने और तब कार्यवाही आरंभ करने का बर्ताव तिरस्करणीय है । गिरफ्तार करने का यांत्रिक, नैमित्तिक और शीघ्र उपयोग अलाभकारी है और अनुच्छेद 21 में अनु-ठापित मूल अधिकार को नकारता है । ऐसा बर्ताव धारा 498-क के दुरुपयोग का मूलाधार है । गिरफ्तार करने की शक्ति को विनियमित और नियंत्रित करने से संबंधित दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों को पुलिस के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में कार्य करना चाहिए और उनकी भावना और प्रयोजन उनके मस्ति-क में प्रधानतः रहना चाहिए । अतिवाद नि-क्रियता की तरह हानिकर है । न्यायालयों और संसदीय समिति द्वारा बारंबार धारा 498-क के मामलों के संदर्भ में गिरफ्तार करने की महत्वपूर्ण शक्ति का प्रयोग करने में सतर्कता की आवश्यता पर बल दिया है । इसी प्रकार, पुनर्मिलन के दरवाजे खुले रखने और पारिवारिक संबंधों को प्रत्यास्थापित करने की आवश्यकता, यदि संभव हो, को वैवाहिक विवादों और घरेलू हिंसा से संबंधित कानूनी उपबंधों और कई निर्णयों में भी उजागर किया गया है । विधि के नियम और आपराधिक न्याय के मूल्यों के लिए मनमाना और अविवेकी गिरफ्तारी एक अभिशाप है । धारा 498-क से संबंधित परिवाद के संबंध में यह ऐसे पुलिस अधिकारियों के लिए सुलभ औजार हो जाता है जो संवेदनशीलता से हीन है या दूरस्थ हेतुक से कार्य करते हैं । गिरफ्तारी को अधिक प्रभावी औजार के रूप में मानने से उपबंध के उद्देश्य को बेहतर तरीके से पूरा नहीं किया जाता है । अन्वे-ण के लंबित रहने तक या इसके पश्चात् गिरफ्तारी को कभी भी उचित दंडात्मक उपाय के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए और इसका प्रयोग कानूनी रूप से अधिकथित शर्तों और मानदंडों के वस्तुपरक मूल्यांकन पर किया जाना चाहिए ।

12.2 अनुपातिकता का मूल्य गिरफ्तार करने से संबंधित नए पुरःस्थापित उपबंधों तक व्याप्त हो जाता है । यदि इन उपबंधों का कर्तव्यनि-ठा से पालन किया जाए तो पुलिस की ओर से मनमानेपन की कार्रवाई करने की संभवना कम हो सकती है । यह कहना निरर्थक है कि गिरफ्तार करने की शक्ति युक्तियुक्ततः कार्य करने के कर्तव्य के साथ जुड़ी है । धारा 498-क के अंतर्गत ऐसी क्रूरता की भिन्न-भिन्न अवस्था है जिसे व्यापकतः कम गंभीर और अधिक गंभीर के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है । गिरफ्तार करने की शक्ति का प्रयोग करने के दृ-टिकोण की एकरूपता का परिणाम असम्यक् कठिनाई और अनाशयित नतीजा होना आबद्धकर है ।

12.3 जोगिन्दर कुमार वाले मामले में व्यक्त निम्नलिखित महत्वपूर्ण मताभिव्यक्तियों का पुनःस्मरण करना इस समय प्रासंगिक है : "मानव अधिकार के आयाम का विस्तार हो रहा है । वहीं अपराध दर भी बढ़ रहा है । हाल में, अविवेकी गिरफ्तारियों के कारण मानव अधिकार अतिक्रमण के बारे में इस न्यायालय को शिकायतें प्राप्त हो रही है । हम कैसे दोनों के बीच संतुलन बनाएं । इस दिशा में वास्तविक दृ-टिकोण अपनाया जाना चाहिए । गिरफ्तार करने की विधि एक व्यक्ति और व्यक्तियों के समूह के अधिकारों स्वतंत्रताओं और विशे-ाधिकारों को समझने और संतुलित करने हेतु एक ओर व्यक्तिगत अधिकारों, स्वतंत्रताओं और विशे-ाधिकारों और दूसरी ओर व्यक्तिगत कर्तव्यों, बाध्याताओं और उत्तरदायित्वों का एक संतुलन हैं ; मात्र यह विनिश्चित करने के लिए कि किस बात की आवश्यकता है और यह निश्चय करने के लिए किए बात पर बल दिया जाए कि ऐसी चुनौती स्वीकार करने के लिए कौन पहले आता है, अपराधी या समाज, विधि अतिक्रमणकर्ता या विधि पालन कर्ता जिसे न्यायमूर्ति कारडोजो द्वारा इस प्रकार नि-कपट रूप से विचार किया गया जब उन्होंने समाज के अधिकारों के विरुद्ध व्यक्तिगत अधिकारों को संतुलित करने के समरूप कार्य को संपन्न किया था ।"

12.4 लेविस मेयर्स को उद्धृत कर **नन्दिनी सत्पथी**[1] वाले मामले में विधि प्रवर्तन के साथ व्यक्तिगत स्वतंत्रता को संतुलित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है : लेविस मेयर्स द्वारा तीव्रता से विरोधाभास प्रकट किया गया : "एक ओर विधि प्रवर्तन की आवश्यकताओं और दूसरी ओर विधि

---

[1] ए. आई. आर. 1978 एस. सी.

प्रवर्तनतंत्र के हाथों अत्याचार और अन्याय से नागरिकों के संरक्षण के बीच संतुलन बनाना राज्यतंत्र की शाश्वत समस्या है । पेन्डुलम व-र्षों से अधिकार की तरफ घूम जाती है ।"

13. गिरफ्तारी से संबंधित उपबंधों को विश्ले-ण और पुलिस का कर्तव्य

13.1 आइए अब, हम अध्याय 5 के गिरफ्तारी से संबंधित उपबंधों का विश्ले-ण करें और कुछ मार्गदर्शक सिद्धांत तैयार करें कि पुलिस को कैसे कार्य करना चाहिए जब धारा 498-क के अधीन अपराध को प्रकट करने वाली प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रापत होती है ।

13.2 2009 के अधिनियम 5 द्वारा पुननिर्मित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41, मजिस्ट्रेट के आदेशों और वारंट के बिना किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए कतिपय शर्तें और निर्बंधन अधिकथित करती है । धारा 41 द्वारा तीन स्थितियों पर विचार किया गया है । खंड (क) किसी पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में संज्ञेय अपराध करने वाले व्यक्ति के बारे में है । उसे सीधे गिरफ्तार किया जा सकता है । हम खंड (ख) और (खक) के बारे में अधिक चिन्तित है । खंड (खक) ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति के संबंध में जिसके विरुद्ध ऐसी विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई है कि उसने ऐसी अवधि के कारावास जो बढ़ाकर सात व-र्ा से अधिक अवधि की जा सकती है या मृत्युदंड से दंडनीय संज्ञेय अपराध किया है । इस प्रकार, अधिक गंभीर संज्ञेय अपराध खंड (खक) की परिधि के भीतर हैं । खंड (खक) के वर्णन के अनुसार वारंट के बिना गिरफ्तार करने की शर्तें इस प्रकार हैं :– (1) संज्ञेय अपराध की विश्वसनीय जानकारी प्राप्त होना ; (2) ऐसी जानकारी के आधार पर, पुलिस अधिकारी को विश्वास करने का कारण है कि ऐसे व्यक्ति ने अपराध किया है । पूर्ववर्ती खंड (ख) सात व-र्ा[1] तक बढ़ाई जाने वाली अवधि के कारावास से दंडनीय संज्ञेय अपराधों को लागू होता है । गिरफ्तारी के लिए अधिक कठोर शर्तें खंड (ख) में अधिकथित की गई हैं । युक्तियुक्त परिवाद या विश्वसनीय जानकारी या युक्तियुक्त संदेह कि व्यक्ति ने संज्ञेय अपराध किया है, धारा 41 के इस भाग के प्रयोग को प्रवर्तित करता है । ऐसे मामले में, गिरफ्तार करने की शक्ति दो शर्तों के अधीन है, जो एक साथ लागू होती है । पहला, पुलिस

[1] धारा 498-क द्वारा विहित दंड तीन व-र्ा तक विस्तारणीय कारावास और जुर्माना है ।

अधिकारी को ऐसे परिवाद, जानकारी या संदेह के आधार पर विश्वास करने का कारण होना चाहिए कि व्यक्ति ने अपराध किया है । परिवाद या जानकारी के आधार पर युक्तियुक्त विश्वास करने की शर्त के अलावा, पुलिस अधिकारी को आगे यह समाधान होना चाहिए कि गिरफ्तारी धारा 41(1)(ख) के खंड (ii) के उपखंड (क) से (ड़) द्वारा परिकल्पित एक या अधिक प्रयोजनों के लिए आवश्यक है । तत्काल निर्देश के लिए उक्त उपखंड (ii) को यहां उद्धृत किया जा रहा है :–

(ii) पुलिस अधिकारी का समाधान हो जाता है कि ऐसी गिरफ्तारी आवश्यक है –

(क) ऐसे व्यक्ति को कोई और अपराध करने से निवारित करने के लिए ; या

(ख) अपराध के उचित अन्वे-ण के लिए ; या

(ग) ऐसे व्यक्ति को अपराध के साक्ष्य को मिटाने या किसी रीति से ऐसे साक्ष्य में छेड़छाड़ करने से निवारित करने के लिए ; या

(घ) ऐसे व्यक्ति का मामले के तथ्यों से भिज्ञ किसी व्यक्ति को किसी प्रकार से उत्प्रेरित करने, धमकी या वादा करने से निवारित करने के लिए जिससे कि उसे न्यायालय को या पुलिस अधिकारी को ऐसे तथ्यों को प्रकट करने से मना किया जा सके ; या

(ड़) जब तक ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जाता, न्यायालय में उसकी उपस्थिति जब कभी अपेक्षित हो, सुनिश्चित नहीं की जा सकती और पुलिस अधिकारी ऐसी गिरफ्तारी करते समय लेखबद्ध रूप से अपने कारण अभिलिखित करेगा ।

ये शर्तें गिरफ्तार करने की प्रबल शक्ति का सहारा लेने के पूर्व, पुलिस अधिकारी द्वारा अपनाए जाने वाले आज्ञापक आदेश की प्रकृति है । धारा 41 के अन्य खंडों की शर्तें हमारे प्रयोजन के लिए सुसंगत नहीं है अतः उन पर विचार-विमर्श नहीं किया जा रहा है ।

13.3 जब किसी संदिग्ध व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाता है और पुलिस अभिरक्षा के विस्तार के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाता है तो

मजिस्ट्रेट को इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए कि क्या व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए विनिर्दि-ट कारण अभिलिखित किए गए हैं और यदि हां, तो प्रथमद्-ट्या, वे कारण सुसंगत हैं और दूसरा, पुलिस अधिकारी द्वारा कतई यह युक्तियुक्त नि-कर्-ा निकाला जा सकता है कि उपरोक्त एक या अन्य शर्तें लागू होती हैं । इस सीमित विस्तार, तक, उस प्रक्रम पर न्यायिक संवीक्षा की जा सकती है । यदि वहां ऐसी संवीक्षा होती है तो साशय या नासमझी से पुलिस अधिकारी द्वारा की गई गलती को यथाशीघ्र प्रत्यावर्तित किया जा सकता है । धारा 498-क वाले मामलों में, इस समाधान तक पहुंचना इतना आसान नहीं है कि धारा 41 के एक या अधिक खंड लागू होते है । अभिरक्षीय पूछताछ द्वारा जो कुछ प्राप्त किया जा सकता है, वह आरंभिक या प्रारंभिक अन्वे-ाण के अनुक्रम में अभियुक्त से पूछताछ करके अच्छी तरह से प्राप्त किया जा सकता है । पति और अन्य पुरु-ा नातेदारों से धारा 41-क के वर्णनानुसार विनिर्दि-ट तारीख को अन्वे-ाक अधिकारी के समक्ष हाजिर होने के लिए बुलाया जा सकता है । अन्वे-ाक अधिकारी सीधे इस उपधारण पर कार्यवाही आरंभ नहीं कर सकता है कि विशे-ाकर वैवाहिक अपराधों में, सच्चाई का पता लगाने के लिए गिरफ्तारी बेहतर मार्ग है । उसे हमेशा यह मस्ति-क में रखना चाहिए कि गिरफ्तारी नियम नहीं है और कानूनी रूप से विहित शर्तों के समाधान पर ही इसका अवलंब लिया जाना चाहिए । ऐसी खबरें हैं कि पुलिस द्वारा धारा 498-क के मामलों में कई गिरफ्तारियां बाह्य प्रतिफलों या विवेक का उचित प्रयोग किए बिना की जाती हैं । वहीं, ऐसी भी खबरें हैं कि धारा 498-क के अधीन परिवादों पर पुलिस गंभीरता से ध्यान नहीं देती और पीड़ित व्यक्ति को हमेशा संदेह की दृ-टि से देखा जाता है । ऐसी पुलिस नि-क्रियता को भी अस्वीकार किया जाना चाहिए ।

13.4 धारा 498-क का स्प-टीकरण जो क्रूरता को परिभा-ित करता है, के दो भाग हैं । स्प-टीकरण का खंड (क) क्रूरता के वर्धित स्वरूप के बारे में है जो गंभीर क्षति कारित करता है । प्रथमतः, गंभीर प्रकृति का जानबूझकर ऐसा आचरण जिससे महिला का आत्महत्या करने की ओर प्रेरित होना संभावित है, खंड (क) की परिधि के भीतर आता है । खंड (क) का दूसरा भाग यह अधिकथित करता है कि जानबूझकर किया गया ऐसा आचरण जो किसी महिला को जीवन, अंग या स्वास्थ्य (चाहे मानसिक या शारीरिक) को गंभीर क्षति या खतरा पहुंचाता है, को 'क्रूरता' माना जाना चाहिए । दहेज से संबंधित तंग किया जाना स्प-टीकरण के खंड (ख) के

भीतर आता है । जब पीड़िता महिला के कथन के साथ प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से खंड (क) के अधीन आने वाले गंभीर प्रकृति की क्रूरता का पता चलता है तो पुलिस अधिकारी को तीव्रता और तत्परता से कार्य करना चाहिए विशे-कर जब शारीरिक हिंसा का साक्ष्य हो । पहली नजर में, व्यथित महिला को उचित चिकित्सा सहायता और परामर्शियों की सहायता उपलब्ध कराई जाएगी और समय गंवाए बिना अन्वे-ण की प्रक्रिया आरंभ की जानी चाहिए । खंड (ख) के अधीन आने वाली क्रूरता की स्थिति में पति के गिरफ्तार करने की आवश्यकता की अधिक मांग है । हम यह स्प-ट करने के लिए इस तथ्य का उल्लेख कर रहे हैं कि हमारे पूर्व मताभिव्यक्ति का यह अर्थ नहीं है कि किसी भी परिस्थिति में, गिरफ्तारी की शक्ति का आरंभतः अवलंब नहीं लिया जाएगा या यह कि अन्वे-क अधिकारी सुलह की प्रक्रिया समाप्त होने तक गिरफ्तारी/अभिरक्षीय पूछताछ को स्थगित किया जाए । हम इस बात पर बल देना चाहते हैं कि प्रत्येक मामले के तथ्यों पर सम्यक् ध्यान देते हुए विवेकाधिकार का युक्तियुक्ततः प्रयोग किया जाना चाहिए । वस्तुतः ऐसी शर्तें जिसके अधीन गिरफ्तार करने की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए, हमेशा पुलिस अधिकारी द्वारा प्रयोग किए जाने वाले विवेकाधिकार का मार्गदर्शन करें । क्योंकि गिरफ्तार करने की शक्ति के प्रयोग के संबंध में कोई अनम्य नियम अधिकथित नहीं किया जा सकता है, अतः हम यह इंगित करना चाहते हैं कि अन्वे-क अधिकारी का विनिश्चय संतुलित और संवेदशनील दृ-टिकोण से युक्त होना चाहिए और उसे उस शक्ति का प्रयोग करने में अधिक उत्सुक नहीं होना चाहिए । इस समाधान पर पहुंचने के लिए उचित और सारवान कारण होने चाहिए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41(i)(ख) के खंड (ii) की अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए तत्काल गिरफ्तारी आवश्यक है । इस संदर्भ में, आयोग इस बात पर बल देना चाहता है कि मामला डायरी में यंत्रवत पुनरुत्पादित करने की पद्धति गिरफ्तारी को प्रभावी बनाने के लिए उक्त खंड के सभी या अधिकांश कारणों को हतोत्साहित और समाप्त किया जाना चाहिए । पुलिस विभाग के प्रमुख को इस बाबत आवश्यक अनुदेश जारी करने चाहिए जो धारा 498-क के मामलों में मनमानी गिरफ्तारियों के विरुद्ध सुरक्षोपायों के उद्देश्य को पूरा करेगा ।

13.5 अन्वे-क अधिकारियों को **जोगिन्दर कुमार** बनाम **उ. प्र. राज्य**[1] वाले

---

[1] ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 1349 : (1994) 4 एस. सी. सी. 260.

मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रासंगिक मताभिव्यक्तियों को स्वयं याद रखना चाहिए । रा-ट्रीय पुलिस आयोग की तीसरी रिपोर्ट को निर्दि-ट करने के पश्चात् उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए उचित परिप्रेक्ष्य में गिरफ्तार करने की विधि को इस प्रकार उल्लिखित किया :

> "उपरोक्त मार्गदर्शक सिद्धांत भारत के संविधान के अधीन गारंटीकृत व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मात्र अनु-ांग हैं । कोई गिरफ्तारी नहीं की जा सकती क्योंकि ऐसा करना पुलिस अधिकारी के लिए विधिसम्मत है । गिरफ्तार करने की शक्ति का अस्तित्व एक बात है । इसके प्रयोग करने का औचित्य बिल्कुल दूसरी बात है । पुलिस अधिकारी को ऐसा करने की उसकी शक्ति के अलावा उसे गिरफ्तार करने को न्यायोचित ठहराने के लिए सक्षम होना चाहिए । किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी और पुलिस लाक-अप में निरोध व्यक्ति की ख्याति और सम्मान को अपूरणीय क्षति कारित कर सकती है । किसी व्यक्ति के विरुद्ध किए गए अपराध करने के मात्र अभिकथन पर नैमित्तिक रीति से कोई गिरफ्तारी की जा सकती । किसी नागरिक के संवैधानिक अधिकारों के संरक्षण के हित और संभवतः उसके निजी हित में पुलिस अधिकारी के लिए यह बुद्धिसम्मत होगा कि व्यक्ति की सदोि-ता के बारे में परिवाद की वास्तविकता और सद्भाव के संबंध में कुछ अन्वे-ाण और युक्तयुक्त विश्वास दोनो के पश्चात् और गिरफ्तारी को प्रभावी बनाने की आवश्यकता पर युक्तियुक्त समाधान के बिना कोई गिरफ्तारी नहीं की जानी चाहिए । पुलिस आयोग की सिफारिशें व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मूल अधिकार की संवैधानिक प्रतिबद्धताओं को मात्र प्रतिबिम्बित करती हैं । कोई व्यक्ति किसी अपराध की सदोि-ता के मात्र संदेह के आधार पर गिरफ्तार किए जाने का दायी नहीं है । गिरफ्तार करने वाले अधिकारी की राय में कुछ युक्तियुक्त औचित्य होना चाहिए कि ऐसी गिरफ्तारी आवश्यक और न्यायोचित है । जघन्य अपराधों के सिवाय, गिरफ्तारी से बचना चाहिए यदि पुलिस अधिकारी व्यक्ति को थाने में हाजिर होने और अनुज्ञा के बिना स्थान न छोड़ने की नोटिस जारी करता है । तब किसी अन्य व्यक्ति को सूचित करने का भी अधिकार है । अनुरोध पर गिरफ्तार व्यक्ति का किसी अन्य व्यक्ति को सूचित करने और प्राइवेट रूप से किसी अधिवक्ता से परामर्श करने के अधिकार को इंग्लैंड में पुलिस और

दंड साक्ष्य अधिनियम, 1984 की धारा 56(1) द्वारा मान्यता प्रदान की गई है ।"

13.6 **सिद्दारम सतलिंगप्पा** बनाम **महारा-ट्र राज्य**[1] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया :

> "गिरफ्तारी अंतिम विकल्प होना चाहिए और यह उन आपवादिक मामलों तक निर्बंधित होना चाहिए जहां उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्त को गिरफ्तार करना अनिवार्य हो ।"

14. दुरुपयोग को प्रशमित करने के कतिपय मार्गदर्शक सिद्धांत/आदेश

14.1 समय की यह मांग है कि उत्तरदायित्व और संवेदना की भावना पैदा करने के लिए पुलिस विभाग के प्रमुख द्वारा पुलिस कार्मिक को क्या करे और क्या न करें जारी करना चाहिए । अविवेकी ढंग से गिरफ्तार करने की शक्ति का अवलंब लेकर उपबंध के दुरुपयोग को हर कीमत पर रोकना चाहिए । अन्वे-नक अधिकारी द्वारा निम्नलिखित आदेश/मार्गदर्शक सिद्धांत पर ध्यान दिया जाना चाहिए और पुलिस विभाग के प्रमुख द्वारा जारी किए जाने वाले परिपत्र में सम्मिलित किया जाए ।

14.2 प्रथम इत्तिला रिपोर्ट विधि के अनुसार दर्ज की जानी चाहिए यदि इससे अपराध का पता चलता है और पुलिस अधिकारी को (धारा 157 के अधिकथनानुसार) अपराध किए जाने का संदेह होने का कारण है । तथापि, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के दर्ज किए जाने के मुद्दे पर, पुलिस कर्मचारियों को इस वि-नय पर उच्च न्यायालय के विनिश्चयों/निदेशों का आवश्कयतः पालन करना चाहिए ।

14.3 प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने पर, पुलिस अधिकारी को परिवाद के अंतर्वस्तु की सत्यता की पुनः जांच करनी चाहिए और क्या उसने स्वेच्छया सभी अभिकथन किया है । इस प्रयोजन के लिए, उसका साक्षात्कार/पूछताछ अधिमानतः महिला अधिकारी या सम्मानीय महिला या विख्यात गैर-सरकारी संगठन से जुड़े परामर्शी की उपस्थिति में की जा

---

[1] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 312 (पैरा 123).

सकती है ।

14.4 तब, अविलंब पुलिस अधिकारी को पति के घर जाकर आरंभिक अन्वे-ण की प्रक्रिया आरंभ करनी चाहिए और पति और अन्य नातेदारों का सर्वप्रथम बयान लेना चाहिए और ऐसे उपाय करने चाहिए जो यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो कि अभियुक्त परिवादी की सुरक्षा और स्वतंत्रता को खतरा पहुंचाने वाले कार्यों में लिप्त नहीं था । दोनों पक्षों को स्थिति को न उकसाने की सलाह दी जानी चाहिए । इसके पश्चात्, मामले को मध्यस्थता केन्द्र को निर्दि-ट करने के कदम उठाए जाने चाहिए यदि कोई जिला विधिक सहायता केन्द्र या सुलहकर्ताओं/परामर्शदाताओं की टीम जिला पुलिस से जुड़ी हो । वृत्तिक परामर्शदाताओं के अभाव में, जिले का पुलिस अधीक्षक या उपपुलिस अधीक्षक मध्यस्थों/परामर्शदाताओं की टीम या पैनल गठित कर सकता है । इसमें भारतीय प्रशासनिक सेवा या अन्य सिविल सेवा अधिकारी (अधिमानतः महिला अधिकारी) और महिला आई. पी. एस. अधिकारी (मामले से असंबद्ध) या मीडिया, विधि या अन्य वृत्ति के सम्मानित सदस्य शामिल किए जा सकते हैं । यदि पक्षकार विनिर्दि-ट व्यक्ति को मध्यस्थ/परामर्शदाता होने का चुनाव करते हैं तो ऐसे व्यक्तियों को निर्दि-ट किया जा सकता है । पुलिस अधिकतम तीस दिनों के भीतर मध्यस्थों या सुलहकर्ताओं से रिपोर्ट अभिप्राप्त कर सकती है और तब नि-कर्ा के आधार पर वे मामले में आगे कार्यवाही आरंभ कर सकती है । यदि स्थिति की मांग हो तो अन्वे-ण पूरा किया जाएगा और उस प्रक्रम पर यदि अभिरक्षीय पूछताछ को लेखबद्ध रूप में अभिलिखित किए जाने के लिए सुसंगत कारणों से आवश्यक पाया जाता है, तो डीसीपी/एसपी स्तर के अधिकारी की अनुज्ञा लेकर पति और अन्य लोगों को गिरफ्तार किया जा सकता है । तब अन्वे-क अधिकारी भी ऐसी कार्रवाई करेगा जो परिवादी महिला की मूल्यवान वस्तुओं की वापसी के लिए आवश्यक हो ।

इन नियमों या मार्गदर्शक सिद्धांतों का यदि पालन किया जाएगा तो ये मूल्य आधारित दृ-टिकोण को मजबूत करते हुए दुरुपयोग का निवारण करेंगे ।

14.5 अनिवासी भारतीय के मामले में, यह सूचना है कि उनके पासपोर्ट अभिगृहीत किए जाते हैं जब वे अन्वे-ण के प्रक्रम पर भारत आते हैं या जब्त करने का आदेश पारित करने के लिए पासपोर्ट अधिकारी के पास

उन्हें भेज दिया जाता है । न्यायालय में मामला लंबित रहने के दौरान, अभियोजक प्रायः जमानत मंजूर करने की शर्त के रूप में न्यायालय से पासपोर्ट को जमा कराने का निदेश देने का अनुरोध करता है । यंत्रवत यह सभी मामलों में नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि यह पति/अभियुक्त को अप्रतिवर्ती नुकसान कारित करेगा और उसे नौकरी गंवाने का जोखिम पैदा हो जाएगा और वीजा समाप्त हो जाएगा । अंततः, सौहार्द्रपूर्ण समाधान और/या कार्यवाही का अभिखंडन या दो-नमुक्ति/उन्मोचन हो सकता है किन्तु नुकसान तो पहले ही हो चुका है । अभियुक्त के बेरोजगार बने रहने की संभावना दोनों के हित में नहीं होगी क्योंकि उपार्जन की हानि आजीविका के साधनों से उसे वंचित करने के अलावा पत्नी के भरणपो-ण के दावों को प्रभावित करेगी । भारी रकम के बंधपत्र और प्रतिभूतियां लेना और अभियोजन द्वारा यथाशीघ्र विचारण को पूरा करने के आवश्यक कदम उठाना उचित अनुक्रम होगा । इस पहलू को भी डीजीपी द्वारा जारी परिपत्रों के माध्यम से संबद्ध पुलिस अधिकारियों के ध्यान में लाया जाना चाहिए ।

15. गृह मंत्रालय की सलाह और ली जाने वाली आगे की कार्रवाई

15.1 आयोग के मतानुसार, सं. 3/5/2008 न्या. सेल तारीख 20 अक्तूबर, 2009 में गृह मंत्रालय द्वारा जारी सलाह का दृ-टिकोण एक सही दृ-टिकोण है और प्रत्येक राज्य के डीजीपी का सम्मेलन करने के पश्चात् इसमें जारी अनुदेशों को दोहराने की आवश्यकता है जिससे कि उनकी अधिकारिता के भीतर पुलिस कर्मचारियों के मार्गदर्शन के लिए उनके द्वारा अनुवर्ती परिपत्र जारी किया जा सके । गृह मंत्रालय ने उक्त परिपत्र में यह बात कही है :–

> "डी. के. बसु वाले मामले में अधिकथित प्रक्रिया का पालन करने के लिए, माननीय उच्चतम न्यायालय ने डी. के. बसु बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य - दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 539/86 तारीख 18.12.1996 के अपने निर्णय में यह कहा है कि वारंट के बिना गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग परिवाद की असलियत और सद्भाव के संबंध में कुछ अन्वे-ण और इस युक्तियुक्त विश्वास के पश्चात् कि व्यक्ति की सदोि-ता है और गिरफ्तार करने की आवश्यकता है, के संबंध में युक्तियुक्त समाधान के पश्चात् ही किया जाना चाहिए । अतः, किसी वैवाहिक विवाद के, सभी

मामलों में गिरफ्तार करने की शक्ति का तुरंत प्रयोग करना आवश्यक नहीं हो सकता है । सुलह, मध्यस्थता, पक्षकारों को परामर्श आदि जैसे विवाद समाधान तंत्र का आरंभ में सहारा लिया जाए ।"

15.2 रा-ट्रीय महिला आयोग के विचार (अर्जी पर राज्य सभा समिति की 140वीं रिपोर्ट में उद्धृत) सारतः गृह मंत्रालय द्वारा उसके सलाह-पत्र में जारी अनुदेशों के अनुरूप हैं ।

15.3 हमने यह पहले उपदर्शित किया है जो पुलिस से करना प्रत्याशित है (पूर्वोक्त पैरा 13 द्वारा) । इन पहलुओं में पुलिस कार्मिकों के मार्गदर्शन के लिए डीजीपी/पुलिस आयुक्तों द्वारा जारी किए जाने वाले परिपत्र/स्थायी आदेश का वि-नय-वस्तु भी होना चाहिए । मार्गदर्शक सिद्धांतों/अनुदेशों के पालन को मानीटर करने का भी तंत्र होना चाहिए । उच्च स्तरीय अधिकारियों द्वारा नियमित और कर्तव्यबद्ध पर्यवेक्षण सही दिशा में इस उपबंध का प्रवर्तन सुनिश्चित करने का मार्ग प्रशस्त करेगा ।

15.4 कुछ राज्यों में, जैसाकि पहले उल्लिखित है, इस संबंध में उच्च न्यायालयों के निदेश हैं कि पुलिस धारा 498-क के अधीन परिवादों से कैसे निपटे । इन निदेशों के आधार पर, यह ध्यान में आया है कि डीजीपी अधिकारियों द्वारा पहले ही कतिपय अनुदेश जारी किए गए हैं । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि उच्च न्यायालय के निदेश बाध्यकर हैं और उच्च न्यायालय के निर्णय पर आधारित अनुदेशों के अधिक्रमण में डीजीपी द्वारा नया परिपत्र जारी नहीं किया जा सकता है । ऐसी स्थिति में, डीजीपी के सम्मेलन में लिए गए विनिश्चय से उच्च न्यायालय को अवगत कराना और उच्च न्यायालय से लिए गए विनिश्चय के आलोक में निदेशों को उचित रूप से रूपांतरित करने का अनुरोध करना उचित अनुक्रम होगा जिससे कि संपूर्ण देश की सोच में एकरूपता हो ।

16. उपधारा (3) जोड़कर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 का संशोधन

16.1 एकरूपता और निश्चितता के हित में, यह वांछनीय है कि आवश्यकतानुसार विधायी अवसंरचना के भीतर आवश्यक मार्गदर्शक सिद्धांत विहित किए जाएं । अतः, हम यह सुझाव देते हैं कि निम्नानुसार दंड

प्रक्रिया संहिता की धारा 41 में उपधारा (3) जोड़ा जाए :

> (3) जहां धारा 41 की उपधारा (1) के खंड (ख) में विनिर्दि-ट प्रकृति की सूचना भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के अधीन अपराध किए जाने के संबंध में प्राप्त होती है वहां पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी की शक्ति का अवलंब लेने के पूर्व पक्षकारों के बीच पुनर्मिलन के कदम उठाएगा और 30 दिनों की अवधि तक इसके परिणाम की प्रतीक्षा करेगा, जब तक कि तथ्यों से यह न पता चलता हो कि धारा 498-क के स्प-टीकरण के खंड (क) के अधीन आने वाली प्रवर्धित क्रूरता की गई है और धारा 41 के खंड (क) में विनिर्दि-ट कारणों में से एक कारण से ऐसे मामले में अभियुक्त को गिरफ्तार करना आवश्यक है ।

16.2 हम यह जोड़ना चाहते हैं कि यह प्रस्तावित उपधारा विद्यमान विधि से कुछ सारतः भिन्न नहीं है और संभवतः इसकी उपयोगिता यह स्प-ट करने में है जो धारा 498-क के प्रवर्तन से संबंधित विशि-ट समस्याओं के आलोक में वस्तुतः अव्यक्त है । यह प्रक्रियात्मक संशोधन है जो उपबंध के अनुचित प्रयोग के विरुद्ध कार्य कर सकता है वहीं यह महिलाओं के जीवन और स्वतंत्रता के संरक्षण के महत्व को कम नहीं करता ।

17. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 358 – प्रतिकर सीमा का बढ़ाया जाना

17.1 ऐसा एक अन्य विधायी परिवर्तन जो आयोग संदिग्ध/अभियुक्त की गिरफ्तारी और अभियोजन को प्रेरित करने वाले मिथ्या और निरर्थक परिवादों को हतोत्साहित करने की सिफारिश करता है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 358 का संशोधन करने के बारे में है जिससे प्रतिकर की रकम को एक हजार से बढ़ाकर पन्द्रह हजार रुपए तक किया जा सके । "एक हजार रुपए से अनधिक" शब्दों के स्थान पर "पन्द्रह हजार रुपए से अनधिक" शब्द रखा जाएगा । यह संशोधन न केवल धारा 498-क तक सीमित बल्कि सामान्यतः मिथ्या और अनुत्तरदायी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट/परिवाद को कुछ हद तक नियंत्रित करने के लिए आवश्यक है । यह भारतीय दंड संहिता (धारा 211) के उपबंध पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना है जिसके अधीन किसी व्यक्ति को मिथ्या रूप से अपराध से आरोपित करना दंडनीय है ।

17क दुरुपयोग के लिए दंड – कोई विनिर्दि-ट उपबंध आवश्यक नहीं

कुछ उत्तर देने वालों का सुझाव (कुछ लेखों में भी) यह था कि ऐसी महिलाओं को दंडित करने के लिए विनिर्दि-ट उपबंध होना चाहिए जो बाह्य कारणों से परिवाद फाइल करती हैं, भ्रामक है । ऐसा कोई कारण नहीं है कि केवल धारा 498-क के लिए ही क्यों ऐसा विशि-ट उपबंध बनाया जाए । किसी भी दशा में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 358 के अलावा विद्यमान उपबंध अर्थात् भा. दं. सं. की धारा 182, 211 और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 250 दुर्भावपूर्ण अभियोग, आदि से निपट सकते हैं ।

18 विपदग्रस्त उदासीन महिलाओं की देखभाल करना राज्य की बाध्यता

एक अधिक महत्वपूर्ण पहलू जिस पर राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा ध्यान दिया जाना चाहिए, यह है कि ऐसी असहाय महिला को आवश्यक सहायता प्रदान किया जाए जो असली शिकायत के साथ पुलिस थाने गई और विपत्ति की दशा में अपने ससुराल वापस जाने का जोखिम नहीं उठा पातीं या यहां तक कि नातेदारों के साथ ठहरने में असमर्थ हैं । या तो उनके माता-पिता नहीं है जो अभिघात की अवधि के दौरान उनकी देखभाल कर सकें या भरणपो-ण कर सकें या परेशानी के बिना उसे अपने साथ रहने देने के लिए नातेदारों की ओर से भी अनिच्छा दर्शाई जाती है । सुलह और समझौते की प्रक्रिया में कुछ समय लग सकता है और कोई नहीं जानता कि इसका परिणाम क्या होगा । इसके अतिरिक्त उचित परामर्श के अलावा, विपदग्रस्त पीड़ित महिला को चिकित्सीय सहायता और ठहरने के लिए अस्थायी आवास के रूप में तत्काल सांत्वना की आवश्यकता होती है । ऐसी परिस्थिति जिससे वह घिरी है केवल राज्य या उसके परिकरण उसकी तत्काल आवश्यकताओं की देखभाल कर सकते हैं । इस समय, शहरों में भी उल्लेखनीय कोई हास्टल और शरण गृह नहीं है जो विपदग्रस्त महिलाओं का कल्याण कर रहे हों । यदि थोड़े से हैं भी तो उसमें कोई उचित सुविधा नहीं है । मुख्य शहारों (कुछ को छोड़कर) में भी महिला पुलिस थानों से जुड़े संकट निवारण केन्द्र नहीं हैं जो विपदग्रस्त महिलाओं को तत्काल सहायता और राहत उपलब्ध करा सकें । अतः, आयोग सुस्प-टतः इस बात पर बल देना चाहता है कि प्रत्येक सरकार को वैवाहिक

घर (ससुराल) छोड़ने वाली और विभिन्न कारणों से अपने नातेदारों के पास ठहरने की स्थिति में न रहने वाली विपदग्रस्त महिलाओं की तत्काल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सर्वप्रमुख बाध्यता सुनिश्चित की जानी चाहिए । ऐसी महिलाएं जो सर्वाधिक प्रभावित है, यदि सहायता नहीं दी जाए, तो वे गरीब और मध्यमवर्गीय पृ-ठभूमि की है । राज्यों को इस समस्या पर पूर्विकता आधार पर विचार करना चाहिए और हमारे संविधान में अनु-ठापित कल्याणकारी लक्ष्य के भाग के रूप में सहायता की आवश्यकता वाली महिलाओं के क-ट दूर करने के लिए आवश्यक उपाय आरंभ करने चाहिए ।

19. सिफारिशों का संक्षिप्तांश

19.1 सर्वोच्च न्यायालय और विभिन्न उच्च न्यायालयों ने कई मामलों में धारा 498-क के दुरुपयोग की न्यायिक अवेक्षा की है । अजिर्यों की संसदीय समिति (राज्यसभा) द्वारा भी इस पर ध्यान दिया गया है । तथापि, दुरुपयोग (जिसका विस्तार किसी अनुभवाश्रित अध्ययन द्वारा स्थापित नहीं हुआ है) स्वयं धारा 498-क को समाप्त करने या धारा को उसकी शक्तियों से वंचित करने का कोई आधार नहीं है । धारा के सामाजिक उद्देश्य और निवारण की आवश्यकता पर ध्यान देना चाहिए, वहीं यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि दूरस्थ हेतुक या भावना के आवेग में मिथ्या या अतिशयोक्तिपूर्ण अभिकथनों वाले फाइल किए गए परिवादों को रोका जाए ।

19.2 विशे-नकर ग्रामीण क्षेत्रों की महिला और पुरु-न दोनों में उपबंध और उपलब्ध उपचार की जागरुकता फैलाने की आवश्यकता है और इस संबंध में जिला और तालुक विधिक सेवा प्राधिकरण, मीडिया, गैर सरकारी संगठन और विधि के छात्र सार्थक भूमिका निभा सकते हैं ।

19.3 वृत्तिक परामर्शदाताओं मध्यस्थों और विधिक सहायता केन्द्रों, सेवानिवृत्त कर्मचारियों/चिकित्सा और विधिक वृत्तकों या मित्रों और ऐसे नातेदारों जिनमें पक्षकारों को विश्वास हो, से यथाशीघ्र सुलह कराने का हर संभव प्रयास किया जाएगा । प्रत्येक जिले में पैनल बनाकर और व्यथित महिलाओं को आवश्यक सहायता देने के लिए कार्रवाई योजना तैयार की जाए । अन्वे-नक अधिकारी को सुलह प्रक्रिया में भाग लेने से विरत रहना चाहिए ।

19.4 प्रश्नात्मक विधि पर कि क्या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के दर्ज किए जाने को युक्तियुक्त समय तक मुल्तवी किया जाए, अनिश्चितता की स्थिति है । कुछ उच्च न्यायालय यह निदेश दे चुके हैं कि प्रारंभिक अन्वे-ाण किए जाने और सुलह प्रक्रिया पूरी होने तक (दृश्य हिंसा और इसी तरह के मामलों के सिवाय) प्रथम इत्तिला रिपोर्ट धारा 498-क के अधीन दर्ज नहीं किया जाए । मुद्दे को हाल ही में उच्चतम न्यायालय की वृहत्तर न्यायपीठ को निर्दि-ट किया गया है । इस संबंध में, जब तक उच्चतम न्यायालय मामले को विनिश्चय नहीं करता तब तक पुलिस को अधिकारितागत उच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि का पालन करना चाहिए ।

19.5 धारा 498-क के अधीन अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से और 237वीं रिपोर्ट में इस आयोग द्वारा पहले ही की गई सिफारिश के अनुसार तीन महीने की प्रशान्तक अवधि के अधीन रहते हुए शमनीय बनाया जाए ।

19.6 अपराध को अजमानतीय बना रहने दिया जाए । तथापि, मनमानी और अनापेक्षित गिरफ्तारियों के विरुद्ध सुरक्षोपाय गिरफ्तार करने की शक्ति से संबंधित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 और 41-क में अधिकथित शर्तों का भाव और भा-ा से कड़ाई से पालन करने और ऐसी प्रकृति के मामलों में पालन किए जाने वाले प्ररुपकिताओं पर पुलिस को संवेदित करने में निहित है । अभिरक्षीय पूछताछ की आवश्यकता का सावधानीपूर्वक निर्धारण किया जाना चाहिए । अति-प्रतिक्रिया और नि-क्रियता दोनों समानतः गलत है । पुलिस को परिवादी की सुरक्षा सुनिश्चित करने और आगे प्रपीड़न को निवारित करने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए ।

19.7 "भा. दं. सं. की धारा 498-क के दुरुपयोग" वि-नय पर तारीख 20 अक्तूबर, 2009 की गृह मंत्रालय की सलाह और इस रिपोर्ट के पैरा 14 में उपवर्णित मार्गदर्शन सिद्धांत/अतिरिक्त पूर्वावधानियों को संकलन किया जाए और गृह मंत्रालय द्वारा इस प्रयोजन के लिए विशे-ा रूप से आयोजित डीजीपी के सम्मलेन के निर्णयों से उन्हें उक्त मार्गदर्शक सिद्धांतों का पालन करने की आवश्यकता से अवगत कराया जाए और तदनुसार परिपत्र/स्थायी आदेश जारी किया जाए । धारा 498-क के मामलों को रास्ते पर लाने और मार्गदर्शक सिद्धांतों का पालन करने के लिए पुलिस विभाग में मानीटरिंग तंत्र बनाया जाए ।

19.8 उपरोक्त सुझावों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, यह सिफारिश किया गया है कि ऊपर पैरा 16 में यथाउपवर्णित, मनमानी और अनावश्यक गिरफ्तारियों को रोकने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 में उपधारा (3) जोड़ा जाए । विधायी अधिदेश जो तत्वतः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 और 157 की भावना से भिन्न नहीं है, को एकरूपता और सुस्प-टता के हित में निहित किया जाना चाहित ।

19.9 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 358 के प्रतिकर रकम को एक हजार रुपए से बढ़ाकर पन्द्रह हजार किया जाए और यह प्रस्तोवित परिवर्तन विचाराधीन धारा तक ही सीमित नहीं है ।

19.10 महिला पुलिस थाना (महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल के नाम से) संख्यात्मक और गुणात्मक दोनों दृ-टि से मजबूत किया जाए । निरीक्षक या इससे ऊपर की पंक्ति की सुशिक्षित और प्रशिक्षित महिला पुलिस अधिकारी ऐसे पुलिस थानों के प्रमुख होंगी । प्रत्येक जिले में पर्याप्त शिक्षित कार्मिक से युक्त सीडब्ल्यूसी स्थापित किया जाए । सक्षम वृत्तिक परामर्शदाता और सम्मानित वृद्ध व्यक्ति/वृत्तिकों जो सुलह और परामर्श दे सकते हैं, का पैनल प्रत्येक जिले के एस.पी/एस.एस.पी. द्वारा बनाया जाए । महिला परिवादियों और धारा 498-क से संबंधित मामलों की अभियुक्त महिलाओं के लिए पुलिस थानों में अलग कमरा हो ।

19.11 ऐसी महिला जो ससुराल वापस नहीं जाना चाहती, के फायदे के लिए आवश्यक सुविधाओं के साथ हास्टल या आश्रय गृह शहरों और जिला मुख्यालयों में बनाए रखा जाए । उन्हें दी गई सहायता समाज कल्याण उपाय का भाग माना जाए जो कल्याणकारी राज्य की एक बाध्यता है ।

19.12 धारा 498-क के मामलों में अंतर्वलित अनिवासी भारतीयों के पासपोर्ट यंत्रवत जब्त नहीं किए जाएं और उसके बजाय, भारी रकम के बंधपत्र और प्रतिभूतियों पर बल दिया जा सकता है ।

19.13 कुल मिलाकर, अभियोजन और न्यायपालिका द्वारा धारा 498-क के अधीन मामलों के शीघ्र निपटान की आवश्यकता पर विशे-न ध्यान दिया जाए ।

ह0/-
[न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्ति) पी. वी. रेड्डी]

ह0/-
[न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्त) शिव कुमार शर्मा]
सदस्य

ह0/-
[अमरजीत सिंह]
सदस्य

नई दिल्ली
29 अगस्त, 2012

उपाबंध – 1

[रिपोर्ट के पैरा 1.1 को निर्दि-ट करें]

भारत का विधि आयोग

भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क से संबंधित

परामर्शपत्र-सह-प्रश्नावली

1. विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त अभ्यावेदनों और उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए, भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने भारत के विधि आयोग से इस पर विचार करने का अनुरोध किया कि क्या विशे-कर अति-विवक्षा के रूप में भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के अभिकथित दुरुपयोग को नियंत्रित करने के लिए उक्त उपबंध में कोई संशोधन करना या अन्य उपाय करना आवश्यक है ।

2. व-र्ा 1983 में धारा 498क विवाहित स्त्री को पति या उसके नातेदारों द्वारा क्रूरता से संरक्षित करने के लिए शामिल की गई थी । तीन व-र्ा तक का दंड और जुर्माना विहित किया गया है । "क्रूरता" पद को व्यापक अर्थ में परिभाि-त किया गया है जिससे कि स्त्री के शरीर या स्वास्थ्य को शारीरिक या मानसिक अपहानि पहुंचाने और किसी संपत्ति या मूल्यवान संपत्ति की विधिविरुद्ध मांग को पूरा करने के लिए उसे या उसके नातेदारों को प्रपीड़ित करने की दृ-टि से तंग करने के कार्य में लगे होने को शामिल किया जा सके । दहेज के लिए तंग करना धारा के बाद वाले भाग की परिधि के भीतर आता है । स्त्री को आत्महत्या करने के लिए स्थिति पैदा करना भी "क्रूरता" का एक तत्व है । धारा 498-क के अधीन अपराध संज्ञेय, अशमनीय और अजामनतीय है ।

3. प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य वाले हाल ही के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि विधान मंडल द्वारा उपबंध पर गंभीर रूप से पुनर्विचार करने की अपेक्षा है । "यह आम जानकारी का वि-ाय है कि अधिकांश परिवादों में घटनाओं का उल्लेख बढ़ा-चढ़ाकर किया जाता है । बहुत अधिकांश मामलों में अति-विवक्षा की प्रवृत्ति भी प्रतिबिम्बित

होती है ।" न्यायालय ने पति और उसके सभी नजदीकी नातेदारों को फंसाने की आम प्रवृत्ति पर ध्यान दिया । सुशील कुमार शर्मा बनाम भारत संघ (2005) वाले पूर्व मामले में भी उच्चतम न्यायालय ने शोक प्रकट किया कि कई दृ-टांतों में, धारा 498क के अधीन व्यक्तिगत दुश्मनी निकालने के लिए दूरस्थ हेतुक से परिवाद फाइल किए जा रहे हैं । यह मत व्यक्त किया गया कि "विधान मंडल के लिए ऐसा रास्ता निकालना आवश्यक हो गया है कि निरर्थक परिवाद या अभिकथन करने वालों से समुचित रूप से कैसे निपटा जाए ।" यह भी मत व्यक्त किया गया कि "उपबंध के दुरुपयोग द्वारा एक नया विधिक आतंकवाद प्रवर्तित हो सकता है । "

4. धारा 498क के अधीन मामलों के सांख्यिकीय आंकड़े से अति-विवक्षा की सच्चाई का पता चलता है । पति के नातेदारों की ऐसी विवक्षा को अधिकांश विनिश्चित मामलों में अन्यायोचित पाया गया । इसके साथ-साथ यह प्रतीत होता है कि विशे-नकर ग्रामीण क्षेत्रों मे रहने वाली समाज के गरीब दर्जे की महिलाएं बिरले ही इस उपबंध का अवलंब लेती हैं ।

5. धारा 498-क के अधीन मामलों की बाबत दो-नसिद्धि की दर बिल्कुल कम है । यह पता चला है कि सौहार्दपूर्ण समाधान जैसी पश्चातवर्ती घटनाओं के कारण परिवादी स्त्रियां अभियोजन को उसके तार्किक नि-कर्ष तक पहुंचाने की रुचि नहीं रखती ।

6. उपयुक्त संशोधनों द्वारा धारा 498क की कठिनाई दूर करने के तर्क (जिसका समर्थन न्यायालय के निर्णयों में व्यक्त मताभिव्यक्तियों और आपराधिक न्याय प्रणाली के सुधार पर न्यायमूर्ति मलिमथ कमेटी रिपोर्ट से मिलता है) इस प्रकार हैं : जब एक बार भा. दं. स. की धारा 498क/406 के अधीन पुलिस के पास परिवाद (प्रथम इत्तिला रिपोर्ट) दर्ज हो जाता है तो अभिकथनों के अंतर्भूत तत्वों पर विचार और प्रारंभिक अन्वे-षण किए बिना प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित पति और अन्य नातेदारों को गिरफ्तार करने या गिरफ्तार करने की धमकी देने का एक आसान हथियार पुलिस के हाथों लग जाता है । जब कुटुम्ब के किसी सदस्य को गिरफ्तार किया जाता है और जमानत की तत्काल पूर्वापेक्षा के बिना कारागार भेजा जाता है तो सौहार्दपूर्ण सुलह और विवाह को बचाने का अवसर हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है । यह इंगित किया गया है कि सुलह की

संभाव्यता से इनकार नही किया जा सकता और पूरी तरह से इसका पता लगाया जाना चाहिए । इस प्रकार पुलिस द्वारा तत्काल गिरफ्तारी प्रतिकूल प्रभाव डालेगी । दीर्घकारी और लम्बे समय तक चलने वाले आपराधिक विचारण कुटुम्ब के संबंधियों के बीच संबंधों में दुश्मनी और कटुता पैदा करते हैं । इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए वैवाहिक मामलों पर विचार करते समय व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए कि यह एक संवेदनशील पारिवारिक समस्या है जिसकी पुलिस की ओर से दंड प्रक्रिया संहिता के संबद्ध उपबंधों के साथ-साथ भा. दं. सं. की धारा 498क के कठोर उपबंधों का फायदा उठाकर अति-उत्साही/बेदर्द कार्रवाईयों द्वारा बिगाड़ने की अनुज्ञा नही दी जाएगी । यह इंगित किया गया है कि दंशन स्वयमेव धारा 498क में नहीं बल्कि दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में इसे अशमनीय और गैर जमानतीय बनाने से है ।

7. दूसरी ओर, यथापूर्व स्थिति बनाए रखने के समर्थन में तर्क संक्षेप में इस प्रकार हैं :–

धारा 498क और घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम जैसे अन्य विधान का अधिनियमन विशे-ा रूप से समाज के ऐसे संवेदनशील वर्ग का संरक्षण प्रदान करने के लिए किया गया है जो क्रूरता और तंग किए जाने के शिकार हैं । इसका सामाजिक प्रयोजन समाप्त हो जाएगा यदि उपबंध की कठोरता को कम किया जाता है । विधि का उपयोग या दुरुपयोग इस उपबंध के लिए विशि-ट नहीं है । तथापि, विधि की विद्यमान अवसंरचना के भीतर दुरुपयोग कम किया जा सकता है । उदाहरणार्थ, गृह मंत्रालय राज्य सरकारों को अनावश्यक गिरफ्तारियों से बचने और गिरफ्तारी को लागू होने वाली विधि में अधिकथित प्रक्रियाओं का कड़ाई से पालन करने के लिए "सलाहकारी निर्देश" जारी कर सकता है । परिवाद की सदाशयता और उन लोगों की दोनिता, जिनके विरुद्ध अभियोग लगाए गए हैं, के संबंध में युक्तियुक्त समाधान पर पहुंचने के पश्चात् ही गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त, पहला अनुक्रम लड़ने वाले पति-पत्नी के बीच प्रभावी मेल-मिलाप और मध्यस्थता होना चाहिए और धारा 498क के अधीन आरोप पत्र फाइल करने का अनुक्रम उन्हीं मामलों में अपनाया जाना चाहिए जहां ऐसे प्रयास असफल हो गए हों और प्रथमदृ-टया मामला बनता हो । वृत्तिक रूप से अर्ह सलाहकारों द्वारा ही पक्षकारों को सलाह दी जानी चाहिए न कि पुलिस द्वारा ।

7.1 ऐसे ही विचार अन्य लोगों के साथ-साथ महिला और बाल विकास मंत्रालय द्वारा दोहराए गए हैं ।

7.2 इसके अतिरिक्त, यह इंगित किया गया है कि कोई विवाहित महिला निराशा और क्रूरता तथा तंग किए जाने के विरुद्ध कोई अन्य उपचार शे-ा न रहने के कारण ही अपने पति और अन्य सगे नातेदारों के विरुद्ध परिवाद करने के लिए पुलिस थाने में जाने का जोखिम उठाती है । ऐसी स्थिति में, कुछ मामलों में दुरुपयोग की अति प्रतिक्रिया के बजाय विद्यमान विधि को अपना निजी अनुक्रम अपनाए जाने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए ।

7.3 यह भी मत व्यक्त किया गया है कि जब एक बार आघात करने वाले कुटुम्ब के सदस्यों को परिवाद की भनक लग जाती है तो परिवादी को और यातना पहुंचायी जा सकती है तथा उसके जीवन और स्वतंत्रता को खतरा हो सकता है यदि पुलिस शीघ्रता और कड़ाई से कार्य नहीं करती । यह दलील दी गई है कि ससुराल में महिलाओं की अप्राकृतिक मृत्यु के बढ़ते अपराधों के कारण धारा 498-क में कोई ढ़िलाई देने की अपेक्षा नहीं है । दूसरा, मध्यस्थता की दीर्घ प्रक्रिया के दौरान भी, उसे धमकी और यातना मिल सकती है । ऐसी स्थितियों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है ।

8. न्यायालय की अनुज्ञा से उक्त अपराध को शमनीय बनाने के पक्ष में राय बनाने की संभावना है । कुछ राज्य, उदाहरणार्थ आंध्र प्रदेश ने पहले ही इसे शमनीय बनाया है । उच्चतम न्यायालय ने राम गोपाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 2010 की विशे-ा इजाजत याचिका (दांडिक) संख्या 6494 (आदेश तारीख जुलाई 30,2010) वाले हाल ही के मामले में यह मत व्यक्त किया कि इसे शमनीय बनाया जाना चाहिए । तथापि, इस बिन्दु पर विचारों में घोर भिन्नता है क्या इसे जमानतीय अपराध बनाया जाना चाहिए । कुछ लोगों द्वारा यह अभिवचन किया गया है कि धारा 498क के अधीन अपराध को कम से कम पति के नातेदारों के संबंध में जमानतीय बनाया जाना चाहिए ।

8.1 ऐसे लोग जो शमनीयता के प्रतिकूल हैं, की यह दलील है कि विशे-ाकर ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं पर अनुचित समझौता करने का दबाव डाला जाएगा और इसके अतिरिक्त उपबंध का निवारक प्रभाव समाप्त हो

जाएगा ।

9. आयोग का यह मत है कि धारा से सहबद्ध दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध दमन और प्रति-तंगीकरण के उपकरण के रूप में कार्य नहीं करेंगे और पुलिस की ओर से अविवेकी और मनमानेपन की कार्रवाई के औजार नहीं बनेंगे । इस तथ्य को नहीं भुलाया जा सकता है कि धारा 498क व्यापक समाज के विरुद्ध अन्य अपराधों से भिन्न कुटुम्ब की समस्या और वैवाहिक अनबन की स्थिति के बारे में है । तथापि, इसका यह अभिप्राय नहीं है कि पुलिस को परिवादी महिला की शिकायत को समानुभूति या समझबूझ से नहीं परखना चाहिए या यह कि पुलिस को निक्रिय भूमिका निभानी चाहिए ।

10. धारा 498क का उदात्त सामाजिक प्रयोजन है और इसे उस समय हस्तक्षेप करने के लिए कानूनी पुस्तक में बना रहना चाहिए जब कभी अवसर पैदा हो । इसके उद्देश्य और प्रयोजन के दुरुपयोग या गलत प्रयोग के लिए इसकी प्रभावकारिता पर अति बल देकर नि-प्रभावी नहीं बनाया जा सकता है । स्वयं गलत प्रयोग इसे निरसित करने या इसके संपूर्ण प्रभाव को छीन लेने का आधार नहीं हो सकता है ।

11. जहां आयोग अन्यायोचित और निरर्थक परिवादों को हतोत्साहित करने और अति-विवक्षा के अनि-ट को दूर करने की आवश्यकता का प्रशंसक है, वहीं वह ऐसा मत व्यक्त करने का इच्छुक नहीं है जो विशे-ाकर इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि महिलाओं के विरुद्ध अत्याचार बढ़ रहे हैं, इसके प्रयोजन को विफल करने के विस्तार तक धारा 498क के प्रभाव को कम करता हो । गुण और अवगुण का मूल्यांकन करते हुए एक संतुलित और समग्र दृ-टिकोण अपनाया जाना चाहिए । इसमें कोई संदेह नहीं है कि गलत प्रयोग स्थितियों पर विचार करने और विधायी या अन्यथा – एक समाधान निकालने की आवश्यकता है ।

12. विशे-ाकर ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे ऐसे गरीब और निरक्षर लोगों को उपबंधों की जानकारी प्रदान करने की भी आवश्यकता है जो प्रायः पियक्कड़ दुर्व्यवहार और महिला समूह से तंग होने की समस्याओं से जूझते हैं । महिलाओं से अधिक, पुरु-ाों को घरों में उत्पीड़न के विरुद्ध महिलाओं को संरक्षित करने के विधि के दंड देने वाले उपबधों की जानकारी देनी चाहिए । व्यथित महिलाओं की तालुक और जिला स्तर विधिक सेवा

प्राधिकरण और/या पेशेवर सलाहकार वाले विश्वसनीय गैर-सरकारी संगठनों तक समुचित उपायों द्वारा आसान पहुंच सुनिश्चित की जानी चाहिए । जागरुकता पैदा करने के लिए एक व्यापक और सुनियोजित अभियान चलाया जाना चाहिए । इस समय, इस दिशा में बिल्कुल प्रयास नहीं किया जा रहा है । वर्तमान परिप्रेक्ष्य में एल. एस. ए. के प्रतिनिधियों, विधि छात्रों और सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा एक बार में कुछ गांवों का दौरा किया जाना चाहिए ।

13. चारों ओर यह धारणा है कि ऐसे अधिवक्ता जिसके पास व्यथित महिला या उसके नातेदार पहली नजर में जाते हैं, को उत्तरदायित्वपूर्ण और वस्तुनि-ठता से कार्य करना चाहिए और निदानित वास्तविक समस्या के अनुकूल उपयुक्त सलाह देनी चाहिए । बढ़ाचढ़ाकर और सिखाए गए बयान तथा पति के नातेदारों के अनावश्यक उलझाव से बचना चाहिए । मामलों से निपटने के लिए विधिक व्यवसायियों की सही सलाह और पुलिस कर्मचारियों की संवेदनशीलता बहुत महत्वपूर्ण है, और यदि ये ठीक है तो निस्संदेह, विधि चक्करदार अनुक्रम नहीं अपनाएगी । दुर्भाग्यवश, यह दृढ़ भावना है कि कुछ अधिवक्ता और पुलिस कार्मिक ऐसी रीति से नैतिक और विधिक रूप से समस्या के प्रति कार्य करने और सोच रखने में असफल रहते हैं जैसी उनसे प्रत्याशा है ।

14. इस प्रकार, उपबंध के क्रियान्वयन के अनुक्रम में ऐसी विविध समस्याएं जो पैदा होती हैं, निम्न हैं : (क) पुलिस सीधे (प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित) पति और उसके कुटुम्ब के अन्य सदस्यों को भी गिरफ्तार करने के लिए दौड़ती है, (ख) थोड़े या किसी औचित्य के बिना उद्वेग और बदला देने की भावना या गलत सलाह के कारण ससुराल और घर के बाहर भी रहने वाले ससुराल वालों और अन्य नातेदारों को फंसाने की प्रवृत्ति, और (ग) व्यथायुक्त महिला की समस्या के प्रति पुलिस की ओर से व्यावसायिक, संवेदनात्मक और प्रभावयुक्त सोच की कमी ।

15. विचारार्थ मुद्दे के संदर्भ में, घरेलू हिंसा से महिला का संरक्षण अधिनियम, 2005 (संक्षेप में पी डी वी अधिनियम) के उपबंधों का निर्देश करना बिल्कुल प्रासंगिक है जो एक सहबद्ध और पूरक विधि है । उक्त अधिनियम का अधिनियमन ऐसी महिलाओं के अधिकारों के अधिक प्रभावी संरक्षण का उपबंध करने के लिए किया गया जो कुटुम्ब के भीतर होने वाली किसी प्रकार की हिंसा के शिकार हैं । वे अधिकार निश्चित ही

दांडिक उपबंधों के मिश्रण के साथ सिविल प्रकृति हैं । अधिनियम की धारा 3 घरेलू हिंसा को बहुत व्यापक शब्दों में परिभाषित करती है । यह धारा 498क के अधीन 'क्रूरता' की परिभाषा में वर्णित स्थितियों को समाविष्ट करती है । अधिनियम ने घरेलू हिंसा से ग्रस्त महिलाओं के हितों के सुरक्षोपाय के लिए व्यापक तंत्र अभिकल्पित किया है । अधिनियम ऐसे संरक्षण अधिकारियों की नियुक्ति का व्यादेश करता है जो प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के नियंत्र और पर्यवेक्षण के अधीन होंगे । उक्त अधिकारी मजिस्ट्रेट, पुलिस थाना और सेवा प्रदाताओं को घरेलू घटना की रिपोर्ट भेजेगा । संरक्षण अधिकारियो से परिवादी पीड़िता को प्रभावी सहायता प्रदान करने और मार्गदर्शन देने तथा शरण, चिकित्सा सुविधा, विधिक सहायता आदि उपलब्ध करने और अधिनियम के अधीन एक या अधिक अनुतोष के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष उसकी ओर से आवेदन प्रस्तुत करने का कार्य करने की भी अपेक्षा है । मजिस्ट्रेट से आवेदन प्राप्त करने की तारीख से साधारणतया 3 दिनों के भीतर इसकी सुनवाई करने की अपेक्षा है । मजिस्ट्रेट कार्यवाहियों के किसी प्रक्रम पर प्रत्यर्थी और/या व्यथित व्यक्ति को सेवा प्रदाता से सलाह लेने का निदेश दे सकता है । 'सेवा प्रदाता' ऐसे लोग हैं जो अधिनियम की धारा 10 की अपेक्षाओं के अनुरूप हैं । मजिस्ट्रेट अधिमानतः महिलाओं की सहायता करने के प्रयोजन के लिए कल्याणकारी विशेषज्ञ की सेवाएं भी अर्जित कर सकता है । धारा 18 के अधीन, मजिस्ट्रेट प्रत्यर्थी को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् और प्रथमदृष्टया यह समाधान होने पर कि घरेलू हिंसा हुई है या होने वाली है, प्रत्यर्थी को घरेलू हिंसा का कोई कार्य करने और/या घरेलू हिंसा के सभी कार्यों को सहायता पहुंचाने या दुष्प्रेरित करने से प्रतिषिद्ध करने का संरक्षण आदेश पारित करने के लिए सशक्त है । मजिस्ट्रेट में निवारण आदेश और धनीय अनुतोष मंजूर करने समेत अन्य शक्तियां निहित हैं । धारा 23 इसके अतिरिक्त ऐसे अंतरिम आदेश पारित करने के लिए मजिस्ट्रेट को सशक्त करता है जो वह एकपक्षीय आदेश सहित अन्य आदेश पारित करना ठीक और उचित समझे । प्रत्यर्थी द्वारा संरक्षण आदेश के भंग को एक अपराध माना जाता है जो संज्ञेय और अजमानतीय है और एक वर्ष तक के कारावास से दंडनीय है (धारा 31 द्वारा) । उसी धारा द्वारा, मजिस्ट्रेट भा. दं. स. की धारा 498क और/या दहेज प्रतिषेध अधिनियम के अधीन आरोप विरचित करने के लिए भी सशक्त है । ऐसा संरक्षण अधिकारी जो संरक्षण आदेश के अनुसार अपना कर्तव्य करने में असफल रहता है या उपेक्षा करता है, कारावास से दंडित किए जाने का दायी है

(धारा 33 द्वारा) । अधिनियम के उपबंध प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबंधों के पूरक हैं । धारा 498क के अधीन परिवाद फाइल करने का अधिकार विनिर्दि-टतः अधिनियम की धारा 5 के अधीन संरक्षित है ।

15.1 इस अधिनियम के उपबंधों और धारा 498क के अधीन कार्यवाहियों की परस्पर प्रतिक्रिया दो पहलुओं पर कुछ महत्व ग्रहण कर लेता है : (1) ऐसा परिवादी जिसने धारा 498क के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करवाया है, के द्वितीयक उत्पीड़न को रोकने के लए अंतरिम संरक्षण आदेश पारित करवा कर मजिस्ट्रेट के शीघ्र हस्तक्षेप की ईप्सा करना, (2) यथाशीघ्र अवसर पर मजिस्ट्रेट के पर्यवेक्षण के अधीन सलाह लेने की प्रक्रिया के लिए मार्ग तैयार करना ।

16. उपरोक्त विश्ले-ाण और पूर्वोक्त उपदर्शित दृ-टिकोण की व्यापक रूपरेखा के आधार पर, आयोग अंतिम रिपोर्ट तैयार करने और सरकार को अग्रे-ात करने के पूर्व निम्नलिखित बिंदुओं पर सामान्य जनता/गैर-सरकारी संगठनों/संस्थानों/बार एसोसिएशनों आदि के विचार आमंत्रित करता है ।

प्रश्नावली

1. भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध का अभिकथन करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त करने पर, आपके अनुसार आदर्शतः पुलिस से क्या प्रत्याशा की जानी चाहिए? उनका दृ-टिकोण और कार्रवाई योजना क्या होनी चाहिए?

2.(क) उच्चतम न्यायालय ने डी. के. बसु (1996) और अन्य मामलों में यह अधिकथित किया है कि वारंट के बिना गिरफ्तारी की शक्ति का अवलंब नैमित्तिक रीति से नहीं लिया जाना चाहिए और यह कि पुलिस अधिकारी का व्यक्ति की दो-ाता और गिरफ्तार करने की आवश्यकता के बारे में युक्तियुक्त रूप से समाधान होना चाहिए । क्या आप सहमत हैं कि वैवाहिक मनमुटाव की स्थिति में यह नियम अधिक बल से लागू होता है और गिरफ्तार करने का कठोर कदम उठाने के पहले पुलिस से अधिक समझबूझ और सतर्कता से कार्य करने की प्रत्याशा की जानी चाहिए?

(ख) अविवेकी और अप्रत्याशित गिरफ्तारी को रोकने के लिए क्या कदम

उठाए जाने चाहिए?

3. क्या आप समझते हैं कि अपराध को जमानतीय बनाना समस्या का उचित समाधान है? क्या यह प्रतिकूल प्रभावकारक होगा?

4. न्यायालय के निर्णयों की कतिपय मताभिव्यक्तियों द्वारा समर्थित ऐसा दृ-टिकोण है कि ऐसी प्रकृति के मामलों में गिरफ्तारी करने के पहले, दोनों पक्षों को सलाह देकर मेल-मिलाप की प्रक्रिया का प्रयास करना चाहिए । दूसरे शब्दों में, आरंभ में ही, दंडात्मक उपाय करने से पहले मेल-मिलाप का पता लगाने की संभावना का उपाय किया जाना चाहिए । क्या आप सहमत हैं कि समस्या की प्रकृति और आयाम को ध्यान में रखते हुए मेल-मिलाप पहला कदम होना चाहिए? यदि ऐसा है, तो कितना बेहतर होता कि मेल-मिलाप की प्रक्रिया को अत्यन्त शीघ्रता से किया जाए? क्या ऐसी समय-सीमा होनी चाहिए जिसके पश्चात् पुलिस मेल-मिलाप की प्रक्रिया के नि-कर्-ा की प्रतीक्षा किए बिना कार्य करने के लिए स्वतंत्र होगी ?

5. यद्यपि पुलिस आरंभतः समुचित सलाह दे सकती है और मेल-मिलाप प्रक्रिया को सुकर बना सकती है फिर भी मत की यह प्रबलता है कि पुलिस को वास्तविक प्रक्रिया में अंतर्वलित नहीं किया जाना चाहिए और उस प्रक्रम पर उनकी भूमिका प्रेक्षक की होनी चाहिए? क्या आपका मत इससे भिन्न है?

6.(क) मध्यस्थों के बारे में सहमति के अभाव में, कौन लोग आदर्शतः दोनों पक्षों के जानकार मित्र या अग्रज या व्यावसायिक सलाहकर्त्ता (जो गैर-सरकारी संगठनों के भाग हो सकते हैं), महिला और पुरु-ा अधिवक्ता जो ऐसे मामलों में कार्य करने के स्वेच्छया इच्छुक हैं, इलाके के सम्मानित/सेवानिवृत्त व्यक्तियों की समिति या जिले के विधिक सेवा प्राधिकरण मध्यस्थ/सुलहकर्त्ता होंगे?

(ख) कैसे यह सुनिश्चित किया जाएगा कि पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी सहजतः यह पहचान कर सकते हैं और उन लोगों से संपर्क कर सकते हैं जो विशे-ाकर इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए मेल-मिलाप कराने या मध्यस्थता करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त

हैं कि व्यावसायिक या सक्षम सलाहकार सभी स्थानों पर उपलब्ध नहीं हो सकते हैं और प्रक्रिया आरंभ करने में कोई विलंब और जटिलताएं पैदा करेगा?

7.(क) क्या आप सोचते हैं कि धारा 498क के अधीन परिवाद की प्राप्ति पर, पुलिस द्वारा पी. डी. वी. अधिनियम के अधीन न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन फाइल किया जाना सुकर बनाने के लिए तत्काल कदम उठाया जाना चाहिए जिससे कि मजिस्ट्रेट अंतरिम संरक्षण प्रदान करने के अलावा सुलह/मेल-मिलाप कराने की प्रक्रिया को गति प्रदान कर सके?

(ख) क्या पुलिस को इस बीच मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा के बिना अभियुक्त को गिरफ्तार करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए?

(ग) क्या मजिस्ट्रेट द्वारा आरंभ की गई सुलह प्रक्रिया पूरी होने तक अन्वे-ण को आस्थगित कर दिया जाना चाहिए?

8. क्या आप सोचते हैं कि अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाना चाहिए? क्या इसे शमनीय न बनाने का कोई विशि-ट कारण है?

9. क्या आप जमानत देने में पति और अन्य अभियुक्तों में अन्तर करना उचित और ठीक समझते हैं?

10(क) क्या आप धारा 498क से संबंधित मामलों के सौहार्दपूर्ण समाधान को सुकर बनाने के संबंध में तालुका और जिला स्तर पर विधिक सेवा प्राधिकरण (एल. एस. ए.) द्वारा निभायी जाने वाली बेहतर और अधिक व्यापक भूमिका की परिकल्पना करते हैं? क्या एल. एस. ए. और पुलिस थाने के बीच बेहतर समन्वय की आवश्यकता है?

(ख) क्या आप सोचते हैं कि व्यथित महिलाएं निचले स्तर पर एल. एस. ए. के पास आसानी से पहुंच जाती हैं और परिवादपूर्व तथा पश्चात्वर्ती प्रक्रमों पर उनसे उचित मार्गदर्शन और सहायता पाती हैं?

(ग) क्या कुछ राज्यों के मध्यस्थता केन्द्र धारा 498क से संबंधित मामलों से निपटने के लिए सुसज्जित और अधिक उपयुक्त हैं?

11. ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं विशे-नकर अधिकतम गरीब वर्ग के लोगों को उपलब्ध संरक्षणात्मक दंड उपबंधों और सिविल अधिकारों की जानकारी फैलाने के लिए आप क्या उपाय सुझाते हैं?

12. क्या आपको ऐसे आश्रय गृहों की संख्या और उनकी दशा के बारे में कोई जानकारी है जिनका गठन ऐसी व्यथित महिलाओं की सहायता करने के लिए पी.डी.वी. अधिनियम के अधीन किया जाना अपेक्षित है जो परिवाद दर्ज कराने के पश्चात् ससुराल में नहीं रहना चाहती या उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है?

13. आपके अनुसार धारा 498क के अधीन अभियोजनों में कम दो-नसिद्धि दर का मुख्य कारण क्या है?

14.(क) क्या अनन्यतः धारा 498क जैसे अपराधों से निपटने के लए प्रत्येक जिले में महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल (सी. डब्लयू. सी.) बनाया जाना वांछनीय है? यदि हां, तो इसकी संरचना और ऐसे सेल में नियोजित महिला पुलिस की क्या अर्हता होनी चाहिए?

(ख) जैसा कि वर्तमान अनुभव से यह दर्शित होता है कि इस बात की संभावना है कि जहां कहीं सी. डब्ल्यू. सी. का गठन किया जाएगा वहां खाली रिक्तियों की संख्या काफी हो सकती है और कार्मिकों को अपेक्षित प्रशिक्षण नहीं मिल सकता है । इस स्थिति में, क्या अधिकारितागत पुलिस थाने को अपवर्जित कर सी. डब्ल्यू. सी. को अन्वे-नण आदि का कार्य सौंपा जाना उचित होगा ?

.....

उपाबंध – II

[रिपोर्ट के पैरा 8.3 को निर्दि-ट करें]

अपराधों (भा. दं. सं.) की शमनीयता वि-नय पर भारत के विधि आयोग के रिपोर्ट 237 से उद्धृत

5. कतिपय अपराधों की शमनीयता

5.1 अब, हम कतिपय **विनिर्दि-ट अपराधों** की शमनीयता के प्रश्न पर विचार करेंगे ।

भा. दं. सं. की धारा 498-क

5.2 क्या धारा 498क में विनिर्दि-ट अपराध को शमनीय बनाया जाए, यदि हां, तो क्या यह न्यायालय की अनुज्ञा से या उसके बिना शमनीय हो, यह दोहरा प्रश्न है?

5.3 धारा 498क महिला के साथ क्रूरता करने के लिए पति या पति के नातेदारों को दंडित करता है । धारा में दी गई क्रूरता की परिभा-ा दो भागों में हैः 1) ऐसी प्रकृति का जानबूझ कर किया गया आचरण जिससे महिला द्वारा आत्महत्या करने, गंभीर क्षतियां जीवन, अंग या स्वास्थ्य (मानसिक या शारीरिक) खतरा किए जाने की संभावना है, 2) उसे या उसके नातेदारों को प्रपीड़ित करने की दृ-टि से महिला को तंग करना जिससे किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की विधिविरुद्ध मांग पूरी हो सके । इस प्रकार, दहेज संबंधी तंग किया जाना और क्षति या उसके जीवन, अंग या स्वास्थ्य को खतरा कारित कर पति या उसके नातेदारों की ओर से उग्र आचरण को धारा 498क की व्याप्ति के भीतर माना जाता है । प्रायः, भा. दं. सं. की धारा 498क के अधीन अभियोजन दहेज प्रति-ोध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन अभियोजन से भी युक्त होता है।

5.4 प्रसामान्यतः, यदि पत्नी बर्ताव में परिवर्तन या पति की ओर से पश्चाताप या उसे पहुंची क्षति की भरपाई के कारण उसके साथ हुए दुर्बर्ताव या तंग किए जाने को माफ करने के लिए तैयार है तो आपराधिक

कार्यवाहियों को समाप्त करने के मार्ग में विधि को आड़े नहीं आने दिया जाना चाहिए । तथापि, शमनीयता के विरुद्ध दिया गया मुख्य तर्क यह है कि दहेज एक सामाजिक बुराई है और ऐसे लोगों जो दहेज की मांग के लिए पत्नियों को तंग करते हैं, को दंडित करने के लिए विधि को प्राइवेट समझौते पर अनुमोदन की अपनी मुहर लगाने के बजाय अपना पूर्ण अनुक्रम अपनाने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए । यह तर्क किया गया कि सामाजिक चेतना और सामजिक हित की यह मांग है कि ऐसे अपराधों को न्यायालय बाह्य समझौते के क्षेत्र से बाहर रखा जाए । इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि इस पहलू पर विचार करते समय, समाज पर अपराध के प्रभाव और हो सकने वाले समाजिक अपहानि की मात्रा पर सम्यक् रूप से विचार किया जाना चाहिए । वहीं, ऐसे अवांछनीय परिणाम जो शमन की अनुज्ञा न दिए जाने से हो सकते हैं, को भी ध्यान में रखना चाहिए क्योंकि सामाजिक अपहानि या सामाजिक हित पर निर्वात में विचार नहीं किया जा सकता । एक समग्र और तार्किक नि-कर्ा निकाला जाना चाहिए । जब सामाजिक बुराई को रोकने के लिए अधिनियमित विधि के प्रभावी कार्यान्वयन के विरुन्द्ध कोई अवरोध नहीं डाला जाएगा, वहीं यह नहीं भूलना चाहिए कि समाज वैवाहिक सौहार्द और व्यथित महिलाओं के कल्याण के संवर्धन में समानतः हितबद्ध है । इस कारण तार्किक और संतुलित सोच की सर्वाधिक आवश्यकता है कि आपराधिक कार्यवाहियों को समाप्त करने के लिए संतु-ट जोड़ों के लिए अन्य मार्ग खुले हों । ऐसा ही एक अनुक्रम उच्च न्यायालय में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अभिखंडन याचिका फाइल करना है । एक प्रासंगिक प्रश्न यह है कि क्या उन्हें समय लगने वाली और खर्चीली प्रक्रिया से गुजरने के लिए भेजना आवश्यक है । यदि ऐसी पत्नी जिसने पति के हाथों से यातना भोगी है, पिछली बातों को भूलने और पति के साथ सौहार्द रूप से जीवन यापन करने या विद्वे-ा या प्रतिशोध के बिना सम्मानपूर्वक अलग होने के लिए तैयार है तो समाज को ऐसे प्रयास की निंदा नहीं करनी चाहिए न ही यह कहा जा सकता है कि ऐसे मामलों में सौहार्दपूर्ण समाधान की विधिक मान्यता निन्द्धि बुराई अर्थात् दहेज को प्रोत्साहित करेगा । धारा 498क को प्रतिकारी होने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए । पारिवारिक जीवन और वैवाहिक संबंध से संबंधित मामलों में, समझौते या सुलह को प्रभावी बनाने के विधिक कार्यवाहियों की समाप्ति की अनुज्ञा देने से होने वाला फायदा या लाभ उस सामाजिक अपहानि की मात्रा से अधिक महत्वपूर्ण होगा जो गैर-अभियोजन से कारित होता । यदि दोनों पक्षों द्वारा हुए समझौते के

बावजूद कार्यवाहियों को चलते रहने की अनुज्ञा दी जाती है तो या तो दो-नसिद्धि की थोड़ी गुंजाइश होगी या पीड़ित व्यक्ति का जीवन और अधिक दयनीय हो जाएगा । किस तरह से सामाजिक सद्भाव का लक्ष्य प्राप्त किया जाए? हम दोहराते हैं कि इस मुद्दे पर विचार करते समय सैद्धांतिक और एकल दृ-टिकोण नहीं अपनाया जा सकता । पारिवारिक विवाद की संवेदनशीलता और व्यक्तिगत तथ्यों और परिस्थितियों की उपेक्षा नहीं की जा सकती । अतः आयोग इस मत का समर्थन नहीं करना चाहता है कि दहेज एक सामाजिक बुराई होने के कारण, किसी भी परिस्थिति में शमन की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए । प्रासंगिकतः यह उल्लेखनीय है कि कई अपराधों की न केवल व्यक्तिगत अपहानि बल्कि सामाजिक अपहानि की संभाव्यता होने के कारण शमनीय अपराधों के रूप में वर्गीकृत किया गया है । इसके अतिरिक्त, धारा 498-क के अधीन आरोप की मुख्य बात दहेज से संबंधित तंग किया जाना होना आवश्यक नहीं है । यह केवल स्प-टीकरण के खंड (क) के भीतर आने वाली 'क्रूरता' हो सकता है और दहेज की मांग उस खंड का अभिन्न भाग नहीं है ।

5.5 शमनीयता के विरुद्ध एक अन्य तर्क यह है कि शमन करने की अनुज्ञा महिलाओं के विरुद्ध हिंसा की विधिक मान्यता के समान होगी और पुनर्मिलन का तथ्य हिंसा को माफ करने का वैधतः न्याय्य आधार नहीं हो सकता है । ऐसे तर्क की स्वीकृति का यह आशय होगा कि विधि की पूर्विकता आपराधिक कार्यवाहियों को उनके तार्किक नि-क-र्ा तक पहुंचाना चाहिए और मतभेदों को सुलझाने की पारस्परिक इच्छा के बावजूद पति को दंडित किया जाना चाहिए । इसका यह अभिप्राय है कि चाहे पुनर्मिलन हो या न हो पति को आसन्न अभियोजन और दंड यदि कोई है, से मुक्त नहीं किया जाना चाहिए; तो केवल धारा 498क ही अपना लक्ष्य प्राप्त करेगा । हम नहीं सोचते कि आपस में लड़ने वाले जोड़ों के बीच हुए पुनर्मेल को ध्यान दिए बिना अभियोजन को अपना अनुक्रम अपनाने की अनुज्ञा देकर धारा 498क के बेहतर लक्ष्य को प्राप्त किया जाएगा । जैसाकि पहले मत व्यक्त किया गया है, पारिवारिक और सामाजिक संबंधों को प्रभावित करने वाले संवेदनात्मक मुद्दे से निपटने के लिए एक संतुलित और समग्र दृ-टिकोण अपनाए जाने की आवश्यकता है । शमन के बिना पुनर्मिलन व्यवहार्यतः संभव नहीं होगा और विधि को पुनर्मिलन के महत्वपूर्ण घटना की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए । विधि के दंडात्मक पहलू पर ही बल नहीं दिया जाना चाहिए । इस तरह के मामलों में, विधि को पति और विमुख

पत्नी के बीच उचित पुनर्मिलन या सौहार्दपूर्ण संबंधों के पुनरुज्जीवन के मार्ग में नहीं आना चाहिए । सभी अभियोजनों और दंडों के पीछे समझदारी यह है कि स्वतंत्रता का निवारण, प्रवंचन और पछतावा और सुधार के संतुलित मिश्रण का कैसे पता लगाया जाए । जैसा कठोर और क्रूर दण्डात्मक सत्ता के कार्यकरण में पाया जाता है, केवल एक ही पहलू का कोई महत्व वर्गीकृत मोडल हो जाएगा ।

5.6 शमन करने के विरुद्ध प्रस्तुत किया गया अन्य तर्क यह है कि असहाय महिलाएं विशे-ाकर जो अधिक शिक्षित नहीं हैं और जिनके पास आजीविका का स्वतंत्र साधन नहीं है,को कार्यवाही वापस लेने के लिए दबाव और प्रपीड़ित किया जा सकता है और पीड़ित महिला को उसकी शिकायत को सुलझाए बिना शान्ति खरीदने के सिवाय कोई और विकल्प नहीं रह जाएगा । तथापि, यह तर्क बहुत सारवान नहीं हो सकता । यही तर्क शमनीय अपराधों के संबंध में भी जहां पीड़ित महिलाएं हैं, रखा जा सकता है । कुल मिलाकर न्यायालय की अनुज्ञा का सुरक्षोपाय संभावित युक्ति के विरुद्ध पर्याप्त नियंत्रण होगा जो पति और उसके नातेदारों/मित्रों द्वारा अपनाए जा सकते हैं । इस मामले में, न्यायालय का कृत्य केवल औपचारिकता नहीं है । न्यायिक मजिस्ट्रेट या कुटुम्ब न्यायालय न्यायाधीश से अधिक सचेत रहने और सक्रिय भूमिका निभाने की प्रत्याशा है । इस संबंध में, न्यायालय किसी महिला अधिवक्ता या वृत्तिक सलाहकार या विधिक सेवा प्राधिकरण के प्रतिनिधि की सहायता ले सकता है और संब्रंद्ध महिला की परीक्षा इनमें से किसी एक की उपस्थिति में उसके चैम्बर में की जा सकती है । अनुकल्पतः, चैम्बर में पीड़ित महिला की परीक्षा के लिए महिला सहकर्मी की भी सहायता ली जा सकती है । प्रसामान्यतः, विचारण मजिस्ट्रेटों/न्यायाधीशों को न्यायिक प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रशिक्षण के अनुक्रम में लिंग संबंधी मुद्दों को संवेदनशीलता से विचार करने के लिए कहा जाता है । दिल्ली, बंगलौर, चेन्नई आदि जैसे शहरों में वैवाहिक विवादों के सौहार्दपूर्ण समाधान निकालने की प्रक्रिया में सक्षम और प्रशिक्षित मध्यस्थों को सम्मिलित किया जाता है । यद्यपि न्यायालय से धारा 498क के अधीन अपराध के शमन के लिए आवेदन पर विचार करने में सम्यक् सावधानी और सतर्कता से कार्य करने की प्रत्याशा है फिर भी, हमारा यह मत है निम्नलिखित अतिरिक्त सुरक्षोपायों को शामिल करना वांछनीय है : –

भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध का शमन

करने का आवेदन फाइल करने और व्यथित महिला का अधिमानतः महिला न्यायिक अधिकारी या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण के प्रतिनिधि या सलाहकार या घनि-ठसंबंधी की उपस्थिति में चैम्बर में पूछताछ करने के पश्चात् यदि मजिस्ट्रेट का यह समाधन हो जाता है कि पक्षकारों के बीच प्रथमदृ-टया स्वैच्छिक और उचित समाधान था तो मजिस्ट्रेट उस आशय को अभिलिखित करेगा और आवेदन की सुनवाई तीन मास या ऐसे अन्य पूर्व तारीख जिसको मजिस्ट्रेट न्यायहित में नियत करे, स्थगित करेगा । स्थगित तारीख को, मजिस्ट्रेट पुनः उसी तरह पीड़ित महिला का साक्षात्कार करेगा और अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् अपराध का शमन करने की अनुज्ञा देने या इनकार करने का अंतिम आदेश पारित करेगा । इस बीच, व्यथित महिला को पर्याप्त आधारों पर अपराध का शमन करने के अपने पूर्व प्रस्ताव को प्रतिसंहृत करने का आवेदन फाइल करने की स्वतंत्रता होगी ।

5.7 तदनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में उपधारा (2क) को जोड़ने का प्रस्ताव है । प्रस्तावित उपबंध यह सुनिश्चित करेगा कि अपराध के शमन का प्रस्ताव स्वैछिक और दबावमुक्त हो और शमन के प्रस्ताव के पश्चात् पत्नी के साथ दुर्बर्ताव न किया जाए । संयोगवश, यह धारा 498-क के अधीन अपराध का शमन करने के आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय की सक्रिय भूमिका निभाने की आवश्यकता को रेखांकित करता है ।

5.8 ऐसे अन्य बिन्दु इस प्रकार हैं जिन पर इस मुद्दे का उत्तर देते समय ध्यान देने की आवश्यकता है कि क्या धारा 498क के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जाए –

5.8.1 भारत के विधि आयोग ने अपनी 154वीं रिपोर्ट (1996) में धारा 20(2) से संलग्न सारणी में धारा 498-क को सम्मिलित करने की सिफारिश की थी जिससे कि न्यायालय की अनुज्ञा से इसका शमन किया जा सके । रिपोर्ट के संबंधित उद्धरण इस प्रकार हैं : – "हाल में, विभिन्न उच्च न्यायालयों ने समाज में सद्भाव और शान्ति के लिए पक्षकारों के बीच समझौते के कारण असंज्ञेय अपराधों की बाबत आपराधिक कार्यवाहियों का अभिखंडन किया है । उदाहरणार्थ, अरुण कुमार वोहरा बनाम रीतू वोहरा, निर्लेप सिंह बनाम पंजाब राज्य वाले मामलों में, भा. दं. सं. की धारा 406 के अधीन अपराधों की बाबत आपराधिक कार्यवाहियों,

दहेज वस्तु या स्त्रीधन के न्यास के आपराधिक भंग और पति या पति के नातेदारों द्वारा स्त्री पर क्रूरता से संबंधित भा. दं. सं. की धारा 498-क के अधीन अपराध को अभिखंडित किया गया है ।"

5.8.2 154वीं रिपोर्ट में जो कुछ कहा गया है, उसके सातत्य में, हम यह इंगित करते हैं कि सर्वोच्च न्यायालय ने बी. एस. जोशी बनाम हरियाणा राज्य[1] वाले मामले में दृढ़तापूर्वक यह प्रतिपादना अधिकथित किया कि न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उच्च न्यायालय द्वारा ऐसे पति और पत्नी के अनुरोध पर आपराधिक कार्यवाहयों को अभिखंडित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अंतनिर्हित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है जिन्होंने मामले को सौहार्दतापूर्वक सुलझा लिया है और विद्वेन को समाप्त करने के इच्छुक हैं । इस मामले में अधिकथित सिद्धांत को निखिल मर्चेन्ट बनाम सी. बी. आई.[2] में अनुमोदन करते हुए उद्धृत किया गया है । तथापि, समतुल्य न्यायपीठ[3] ने इन विनिश्चयों की शुद्धता पर संदेह किया और वृहत्तर न्यायपीठ के विचार के लिए मामला निर्दि-ट किया । निर्दि-ट करने वाले न्यायपीठ के अनुसार न्यायालय गैर-शमनीय अपराधों का समन करने की अप्रत्यक्षतः अनुज्ञा नहीं दे सकता है ।

5.8.3 धारा 498क से संबंधित विधि आयोग की 154वीं रिपोर्ट की सिफारिश को 177वीं रिपोर्ट (2001) में दोहराया गया है । आयोग ने यह पाया है कि पिछले कई व-ों से, उक्त अपराध को शमन करने के लिए व्यक्तियों और संगठनों से विधि आयोग को अनेक अभ्यावेदन प्राप्त हुए हैं ।

5.8.4 इसके अतिरिक्त, आपराधिक न्याय-प्रणाली के सुधार पर न्यायमूर्ति मलिमथ कमेटी की रिपोर्ट ने धारा 498क को शमनीय अपराध बनाने के अभिवाक् पर दृढ़ता से समर्थन किया । कमेटी ने यह मत व्यक्त किया :–

"कम सहनशील और आवेशी महिला छोटी-छोटी बातों पर भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करा सकती है। परिणाम यह होता है कि पति और उसके परिवार के सदस्य तत्काल गिरफ्तार हो जाते हैं और उसे निलंबित कर दिया जाता है और नौकरी छूट जाती है । अभिकथित अपराध

---

1 पूर्वोक्त टिप्पण 6.

2 पूर्वोक्त टिप्पण 7.

3 ज्ञान सिंह बनाम पंजाब राज्य [2010 (12) स्केल 461]

अजमानतीय होने के कारण निर्दो-न व्यक्ति अभिरक्षा में कारागार में रहते हैं । भरण-पो-ण का दावा आग में ईंधन डालने का करता है, विशे-कर यदि पति न दे सकता हो । अब महिला अपना विचार बदल सकती है और भूल जाने और क्षमा करने की सोच बना सकती है । पति भी की गई भूल को महसूस कर सकता है और स्नेहमय और मैत्रीपूर्ण संबंध के लिए नए अध्याय खोल सकता है । महिला पुनर्मिलन को पसन्द कर सकती है । किन्तु यह विधिक बाधाओं के कारण संभव नहीं हो सकता है । चाहे वह परिवाद को वापस लेकर सुधार क्यों न करना चाहती हो, वह ऐसा नहीं कर सकती क्योंकि अपराध अशमनीय है । पारिवारिक जीवन में वापस लौटने के दरवाजे बंद हो जाते हैं । इस प्रकार, वह अपने पैतृक कुटुम्ब की दया पर रह जाती है .....।

अतः यह धारा न तो पत्नी और न ही पति की सहायता करती है । अपराध अजमानतीय और अशमनीय होने के कारण निर्दो-न व्यक्ति को कलंक और कठिनाई झेलने के लिए विवश करता है । ऐसे निर्दयी उपबंध जो अपराध को अजमानतीय और अशमनीय बनाता है, पुनर्मिलन के विरुद्ध प्रवर्तित रहता है । अतः, पति-पत्नियों को एक साथ आने का अवसर देने के लिए इस अपराध को (क) जमानतीय ओर (ख) शमनीय बनाना आवश्यक है ।"

यद्यपि यह आयोग उपरोक्त पैरा में व्यक्त मताभिव्यक्तियों को समग्रतः पृ-ठांकित करने के लिए आनत नहीं है किन्तु उनमें से कुछ इसे शमनीय बनाने के हमारे नि-कर्-ा को सुदृढ़ बनाते हैं ।

5.8.5 मलिमथ समिति के मतों और विधि आयोग की 154वीं रिपोर्ट की सिफारिशें आपराधिक विधि (संशेधन) विधेयक, 2003 (अगस्त, 2005) पर गृहमंत्रालय की विभाग-संबंधी संसदीय स्थायी समिति की 111वीं रिपोर्ट में अनुमोदन के साथ निर्दि-ट की गई थी । स्थायी समिति ने इस प्रकार मत व्यक्त किया : "विमुख पति-पत्नी को एक साथ लाने का अवसर उपलब्ध कराना वांछनीय है इसलिए,दंड प्रक्रिया संहिता की उपधारा (2) के अधीन सारणी में इस धारा को अंतःस्थपित करके भा. दं. सं. की धारा 498क के अधीन अपराध को शमनीय बनाना प्रस्तावित है ।"

5.8.6 दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 2006 पर उक्त स्थायी समिति (2008) की 128वीं रिपोर्ट में 111वीं रिपोर्ट में व्यक्त सिफारिश को

दोहराया गया ।

5.8.7 उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के मत धारा 498क के अधीन अपराध को शमनीय मानने का एक अन्य औचित्य प्रदान करते हैं । राम गोपाल बनाम म. प्र. राज्य वाले मामले में पारित संक्षिप्त आदेश में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि अन्य के साथ धारा 498क के अधीन अपराधों को विधि में उपयुक्त संशोधन सम्मिलित करके शमनीय बनाया जा सकता है । बम्बई उच्च न्यायालय ने काफी पहले 1992 में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में धारा 498-क को सम्मिलित करने के लिए उस धारा को संशेधित करने का ठोस सुझाव दिया था ।

प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति दलवीर भंडारी ने अधिवक्ताओं से धारा 498क के प्रत्येक शिकायत को आधारभूत मानवीय समस्या मानने और उस मानवीय समस्या के सौहार्दपूर्ण समाधान निकालने के लिए पक्षकारों की सहायता करने हेतु गंभीर प्रयास करने को प्रोत्साहित किया । उच्चतम न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि न्यायालयों को इन शिकायतों पर विचार करते समय गहन सावधानी और सतर्कता बरतनी चाहिए और विचार करते समय व्यावहारिक वास्तविकताओं पर ध्यान देना चाहिए । इसके अतिरिक्त, यह मत व्यक्त किया गया कि : मामले को समाप्त करने के पूर्व, हम यह व्यक्त करना चाहते हैं कि विधान द्वारा संपूर्ण उपबंध पर गंभीरता से फिर से परिशीलन करने की अपेक्षा है । यह भी आम जानकारी का वि-नय है कि अधिकांश शिकायतों में घटना को बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया जाना प्रतिबिम्बित होता है । बहुत अधिकांश मामलों में अति विवक्षा की प्रवृत्ति का भी प्रतिबिम्बन होता है । उच्चतम न्यायालय ने तब निम्नलिखित मत व्यक्त किया : "विधान मंडल के लिए शिक्षित आम राय और व्यावहारिक वास्तविकताओं पर विचार करना और विधि के सुसंगत उपबंधों में आवश्यक परिवर्तन करना अनिवार्य है । हम रजिस्ट्रार को इस निर्णय की प्रति विधि आयोग और केन्द्रीय विधि सचिव, भारत सरकार को भेजने का निदेश देते हैं जो समाज के वृहत्तर हित में समुचित कदम उठाने के लिए इसे माननीय विधि और न्याय मंत्री के समक्ष इसे प्रस्तुत करें ।"

5.9 एक अन्य पहलू लड़ रहे पति-पत्नी के बीच सुलह को प्रभावी बनाने पर बल देने वाली विधि की नीति है जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए । कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 9, हिन्दू विवाह अधिनियम,

1955 की धारा 23(2) और विशे-न विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 34(2) के उपबंध न्यायालय पर सुलह और सौहार्दपूर्ण समाधान को सुकर बनाने के लिए आवश्यक कदम उठाने की बाध्यता अधिरोपित करते हैं ।

5.10 यह उल्लेख करना श्रेयस्कर है कि आंध्र प्रदेश राज्य विधान मंडल ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) की दूसरी सारणी में निम्नलिखित अंतःस्थपित करके संशोधन किया :

किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा उनके प्रति क्रूरता करना	498-क	स्त्री के प्रति क्रूरता करना : परन्तु तीन मास की न्यूनतम अवधि न्यायालय के समक्ष समझौते के अनुरोध या आवेदन की तारीख से व्यपगत होगी और न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध का शमन करने के अनुरोध को स्वीकार कर सकता है बशर्ते कोई पक्षकार मध्यवर्ती अवधि में मामले को वापस न ले ।

यह संशोधन करते समय विभिन्न मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त मताभिव्यक्तियों पर विचार किया गया । संशोधन 1 अगस्त, 2003 को प्रवृत्त हुआ । हमारी सिफारिश सारतः इसी तरह है ।

5.11 विधि आयोग को प्राप्त उत्तरों में प्रतिबिम्बित अत्यधिक मत और ऐसे विचार जो आयोग को जिला और अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों, अधिवक्ताओं और विधि छात्रों से विचार-विमर्श के अनुक्रम में प्राप्त हुए हैं, दूसरा कारण है जिससे हम धारा 498क के अधीन अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाने के लिए विधि का संशोधन करने की सिफारिश करना चाहते हैं । उत्तर देने वालों की सूची उपाबंध 1-ख पर है जिनसे आयोग को विचार प्राप्त हुए । शमनीयता के बिन्दु को छूने वाले ऐसे मतों का विश्ले-ण उपाबंध 1-क पर है । आयोग द्वारा प्रकाशित धारा 498-क के विभिन्न पहलुओं पर परामर्श पत्र-सह-प्रश्नावली यहां उपाबंध-2 के रूप में संलग्न है ।

5.12 महिला अधिकारियों सहित न्यायिक अधिकारियों के सम्मेलन में,

अपराध को शमनीय बनाने के पक्ष में लगभग एकमत था । ऐसी महिला अधिवक्ताओं ने प्रस्ताव का विरोध नहीं किया जो विशाखापतनम, चेन्नई और औरंगाबाद में हुए सम्मेलनों में उपस्थित थी । दिल्ली न्यायिक ऐकेडमी में विभिन्न पंक्तियों के लगभग 35 न्यायिक अधिकारियों के साथ हुए हाल ही के सम्मेलन में शमनीयता के बिन्दु पर मतैक्य था । तथापि, कुछ न्यायाधीशों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) के अधीन शमन का अंतिम आदेश पारित करने के लिए 3 मास की गर्भावधि अनुज्ञात करने के बारे में आपत्ति जतायी । यह इंगित किया गया कि इस बारे में कुछ नमनीयता होनी चाहिए और 3 मास की अवधि का विशे-ाकर वहां कठोर पालन करने की आवश्यकता नहीं है जहां सिविल विवादों से संबंधित समझौते का पैकेज हो । इस सुझाव को ध्यान में रखते हुए आयोग ने यह उपबंध किया है कि न्याय हित में, मजिस्ट्रेट कम समय के भीतर आदेश पारित कर सकता है ।

5.13 अतः, विधि आयोग का यह सुविचारित मत है कि भा. दं. सं. की धारा 498क के अधीन अपराध को विधि की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाए । तदनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) का भाग गठित करने वाली सारणी-2 में धारा 494 को निर्दि-ट करने वाली प्रवि-टि के पश्चात् और धारा 500 से संबंधित प्रवि-टि के पूर्व निम्नलिखित अंतःस्थापित किया जाए ।

किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा उसके प्रति क्रूरता किया जाना	498क	ऐसी स्त्री जिसके प्रति क्रूरता की गई है ।

उपधारा (2क) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में जोड़ी जाएगी,

जैसा पूर्वोक्त पृ-ठ 17 के पैरा 5.6 में उपवर्णित है ।

उपाबंध – III

[रिपोर्ट के पैरा 10.1 को निर्दि-ट करें]

ऐसे व्यक्तियों, संगठनों और अधिकारियों की सूची जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया

क. भा. दं. सं. की धारा 498-क की प्रश्नावली का उत्तर देने वाले व्यक्तियों की सूची

सर्व श्री/श्रीमती

1 स्वाति गोयल, अहमदाबाद
2 नीरज गुप्ता, दिल्ली
3 विवेक श्रीवास्तव,
4 सतीश के. मिश्रा, दिल्ली
5 कलपक शाह, अहमदाबाद
6 समीर झा
7 खारक महरा, नैनीताल
8 सौरभ ग्रोवर
9 कोमल सिंह, नई दिल्ली
10 कौशलराज भट्ट, अहमदाबाद
11 अल्का शाह, अहमदाबाद
12 सौमिल शाह, अहमदाबाद
13 त्रिलोक शाह, अहमदाबाद
14 अल्पाक शाह, अहमदाबाद
15 भावना शाह, अहमदाबाद
16 कौशल किशोर और 27 अन्य, विशाखापत्तनम निवासी
17 इयामामीत
18 वि-णुवर्धना, वेलागाला
19 हरि ओम सांधी, नई दिल्ली
20 खड़क सिंह मेहरा, नैनीताल
21 विराग आर. धुलिया, बंगलोर
22 कुमकुम विकास सिरपुरकर, नई दिल्ली
23 गौरव बंदी, इन्दौर
24 गौरव सेहरावत
25 आशी-ा मिश्रा, लखनऊ

26 उमंग गुप्ता, रामपुर, बलिया
27 अवधेश कुमार यादम, नागपुर
28 टी. आर. पदमाजा, सिकन्दराबाद
29 टी. सी. राघवन, सिकन्दराबाद
30 सी. श्याम सुन्दर, अहमदाबाद
31 शोभा देवी, आर. आर. डीटी, हैदराबाद
32 ए. नागेश्वर राव, हैदराबाद
33 प्रवीण चंद, हैदराबाद
34 आर. बी. टीम्मा रेड्डी, हैदराबाद
35 ए. वेणु गोपाल, कडापा, हैदराबाद
36 आदित्य, हैदराबाद
37 बी. वाई. लाल, हैदराबाद
38 सब्रमणियम कटारी, हैदराबाद
39 ए. साई किरण, हैदराबाद
40 एस. जगन्नाथ, बंगलौर
41 प्रसाद चुइलाल, पुणे
42 विस्वादीप पॉल, पुणे
43 अविनाश डी. गुणे, पुणे
44 दामोदर वार्डे, इंदौर
45 केदार अम्बेडकर, पुणे
46 संदेश वी. चोपदेकर, पुणे
47 देवकांत वार्डे, पुणे
48 संजीत गुप्ता, पुणे
49 सेडरीक डी' सुजा, पुणे
50 अमनदीप भाटिया, पुणे
51 अर्जुन सिंह रावत, पुणे
52 एन. के. जैन, उज्जैन
53 राज कुमार जैन, उज्जैन
54 शशीधर राव, हैदराबाद
55 मोहम्मद हिदायतुल्ला, हैदराबाद
56 चंद्र शेखर, हैदराबाद
57 पी. सुगुनावती, हैदराबाद
58 वी. डेविड, हैदराबाद
59 रेड्डी विद्याधर, आर. आर. जिला, हैदराबाद

60 ईश्वर लाल, आर. आर. जिला, हैदराबाद
61 ए. सत्यनारायण, हैदराबाद
62 एम. वी. रामा मोहन, हैदराबाद
63 के. वी. इंदिरा, केरल
64 पी. जाजू, बंगलौर
65 जी. आर. रेड्डी, हैदराबाद
66 डी. एम. नाथानील, हैदराबाद
67 के. श्रीराम, हैदराबाद
68 रजनीश के. वी., हैदराबाद
69 एम. वी. आदित्य, हैदराबाद
70 पी. रंगा राव, हैदराबाद
71 टी. वी. एस. राम रेड्डी, आर. आर. जिला, हैदराबाद
72 आर. राहुल, निजामाबाद
73 जे. पी. साहु, दामोह
74 बी. विनोद कुमार, निजामाबाद
75 पोनवियाह कटारी, हैदराबाद
76 पी. के. आचार्य, हैदराबाद
77 बी. यमुना, चेन्नई
78 जे. सरत चंद्र, अनंतपुर
79 पी. एन. राव, अमलापुरम
80 के. नारासयाह, हैदराबाद
81 के. रामाकृ-ण राव, राजामुंदरी
82 डी. एन. सैमुअल राज, हैदराबाद
83 डी. एन. लावाने, हैदराबाद
84 वी. मधानी, सिकन्दराबाद
85 आर. राजशेखर रेड्डी, हैदराबाद
86 पी. श्रीराम मूर्ति, हैदराबाद
87 के. एल. स्वापाना, राजामुंदरी
88 गौरी शंकर, हैदराबाद
89 एल, नरसिंहा राव, हैदराबाद
90 सुशील कुमारा आचार्य, हैदराबाद
91 डी. एन. केरूपावसम, हैदराबाद
92 टी. रमेश, हैदराबाद
93 पी. सतीश कुमार, हैदराबाद

94 टी. श्रीनिवास, नालगौडा
95 एम. सतीश किरण, आर. आर. जिला, हैदराबाद
96 पारथासारथी, सिकन्दराबाद
97 सरस्वती देवी, हैदराबाद
98 ए. रंगाभया, हैदराबाद
99 टी. अन्नापूर्णा, आर. आर. जिला, हैदराबाद
100 साह अली अहमद, सिकन्दराबाद
101 ए. साई नाथ, हैदराबाद
102 एस. मनसा हैदराबाद
103 समीर बक्शी, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल
104 रूमी डे, पश्चिम बंगाल
105 भानू डे, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल
106 सुमन कु. डे, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल
107 टिन्नी गौर, जबलपुर
108 अरुण यादव, जबलपुर
109 टी. सालगु, उज्जैन
110 आशी-न गुप्ता, उज्जैन
111 टी. एम. कामरान, पुणे
112 पु-पाल स्वर्णकार, दुर्ग
113 कर्नल, एच. शर्मा, नाएडा
114 राणा मुखर्जी, अधिवक्ता, माननीय सचिव, बार एसोसिएशन, उच्च न्यायालय, कलकत्ता
115 नागारथना ए. सहायक प्रोफेसर लॉ, एनएलएसआईयू, नगरभावी, बंगलौर
116 राज घो-ाल, थाने (प.) महारा-ट्र
117 पंकज आर. सोनटक्के, कांडिवाली (पू.) महारा-ट्र
118 आशी-न अग्रवाल, विखरोली (प.) महारा-ट्र
119 सावियो फर्नांडिज, ठाणे (प.) महारा-ट्र
120 आनंद एम. झा, कल्याण (प.) महारा-ट्र
121 सच्चिदानंद सिंह पटेल, नवी मुम्बई, महारा-ट्र
122 अर्घ्य दत्त, नेरुल, महारा-ट्र
123 देवब्रत भाद्रा, जमेशदपुर, झारखंड
124 विकास झुनझुन वाला, वर्ली, महारा-ट्र
125 मुकुंद झाला, सिंह दरवाजा, वर्द्धमान, पश्चिम बंगाल

126 संदीप डे, दोमबीवल्ली (पू.) महारा-ट्र
127 अनुराग जोशी, ठाणे (प.) महारा-ट्र
128 गायत्री देवी, सागर रोड, हैदराबाद
129 रमेश लाल, शालीमार बाग, दिल्ली
130 प्रियांक पराख, मैनचेस्टर, यूएसए
131 कतरी राम वेंकटेश, रंगा रेड्डी, जिला आंध्र प्रदेश
132 सारथ चंद्र पी., पंजागुट्टा, हैदराबाद
133 सुब्बा राव पी, पंजागुट्टा हैदराबाद
134 वी. कामालम्मा, चंदानगर, हैदराबाद
135 डा. पी. सुधीर, काकीनादा, आंध्र प्रदेश
136 एस. एन. कुमार, हैदराबाद
137 के. वी. एन. एस. लक्ष्मी, राजामुंदरी
138 मनोज कुमार साहू, कंचनबाग, हैदराबाद
139 के. एस. राम, विजयनगर कॉलनी, हैदराबाद
140 एम. राम बाबू, जनप्रिया नगर कॉलनी, रंगा रेड्डी जिला, ए. पी.
141 राम प्रकाश शर्मा, रोहणी, नई दिल्ली
142 मंजू यादव, जबलपुर
143 तेज यादम, आधारतल, जबलपुर
144 चंद्र यादव, आधारतल, जबलपुर
145 संतो-न विश्वकर्मा, आधारतल, जबलपुर
146 आशुतो-न यादव, आधारतल, जबलपुर
147 अमिताभ भट्टाचार्य, वर्धा रोड, नागपुर
148 कृ-ण आर. के. वी.
149 मिलाप चोरारिया, रोहणी, नई दिल्ली
150 आनंद बल्लभ लोहाणी, हल्द्वानी, उत्तराखंड
151 पारथा साधुखान, हैदराबाद
152 रमेश कुमार जैन
153 नामदेवन एन.
154 प्रोनॉय घो-न, कैचर, असम
155 सिबी थॉमस, बरुच, गुजरात
156 आर. एस. शर्मा, अमेटी विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश
157 टी. गोपाल कृ-ण, चिचमागुलर
158 एन. एस. महेश, बंगलौर, कर्नाटक
159 शैलजा जी. हरिनाथ, बंगलौर

160 वी. वी. लक्ष्मणन्, अंबात्तूर, चेन्नई
161 जयेश एम. पोरिया
162 पी. रूकमा चारी, बंगलौर
163 दीपक केसरी, बंगलौर
164 राजशेखर, सी. आर., बंगलौर
165 एन. एच. शिंगगांव, विगनान नगर, बंगलौर
166 अजय एम. यू. इलैक्ट्रानिक सिटी, बंगलौर
167 वर्द्धमान नायर, बंगलौर
168 कृ-णा मूर्ति, बंगलौर
169 सशीधर सी. एम., विनायक विस्तार, बंगलौर
170 नारायण कुमार, बंगलौर
171 अमजद एफ. जामादोर, बेलगाम, कर्नाटक
172 मोहम्मद अरशद, रंगनाथ कॉलनी, बंगलौर
173 बी. एम. पठान, हुबली, कर्नाटक
174 प्रोनॉय कुमार घो-न, कैचर, असम
175 एन. एन. स्यूगगांव, विगनन नगर, बंगलौर
176 नाधिकानाथ मल्लिक, कोलकाता, पश्चिम बंगाल
177 मकसूद मुजावर
178 सरोज बाला धवन, डीएलएफ गुड़गांव, हरियाणा
179 विराग आर. धुलिया, सी. सी. रमण नगर, बंगलौर
180 रहमातुल्ला शेरीफ, गंगा नगर, बंगलौर
181 अविनाश कुमार, मेन एचएसआर लेआउट, बंगलौर
182 रामाकृ-णा
183 राजकुमार, रोहतक
184 रीतेश देहिया
185 वीरेश वर्मा
186 सुधा चौरंग, चक्रबर्ती, हुगली, पश्चिम बंगाल
187 सुश्री मनी-ा सी. शींकार
188 डा. चंद्रकांत के. शींकार
189 श्री नागी रेड्डी मद्दिगापु (वरि-ठ नागरिक) सेवानिवृत्त आंध्र प्रदेश राज्य एग्रो इंडिया वि. कार्पो. इम्प. मचेरला, जिला गुंटुर
190 श्री हरीश देवान, नई दिल्ली
191 सुधा गौरंगा चक्रबर्ती, खिड़की लेन, चिनसुराह, हुगली, पश्चिम बंगाल

192 डा. मोहन सिंह साथ, 33 वेस्टहोल्मे गार्डेन्स, रूइस्लीप, मिडलसेक्स, यू.के. (एनआरआई)

193 श्री हेमंत कुमार वर्मा, सीनियर लेक्चरर सिविल इंजी. राजकीय पॉलीटेक्नीक कॉलेज, अजमेर राजस्थान

ख. भा. दं.. सं. की धारा 498-क की प्रश्नावली का उत्तर देने वाले संगठनों/संस्थानों की सूची

1 सेव इंडिया हार्मोनी (श्री बी. के. अग्रवाल, अध्यक्ष) विशाखापत्तनम
2 एसआईएफएफएमडब्ल्यूबी (श्री एस. भट्टाचार्यजी) कोलकाता
3 विजिलेंट वुमेन मंच (सचिव, सुश्री सुमन जैन), दिल्ली
4 नेशनल फैमिली हार्मोनी सोसाइटी, अध्यक्ष (श्री पी. सुरेश), कर्नाटक और 41 अन्य
5 मदर्स एंड सिसटर्स इनिसिएटिव – एमएएसआई, (सुश्री शालिनी शर्मा), महासचिव
6 भारत बचाव संघटन, (श्री विनीत रूइया) अध्यक्ष, कोलकाता
7 प्रीतो पुरुन परि-द, एनजीओ, कोलकाता
8 आईएनएसएएएफ, नई दिल्ली
9 ऑल इंडिया फॉरगॉटेन वुमेंस एसोसिएशन, हैदराबाद
10 मेबर्स ऑफ मिलिसल वुमेन अरेस्टेड कंपेन (संस्था) फरीदाबाद, हरियाणा
11 द केरल फेडरेशन आफ वुमेन लॉयर्स, सचिव, (सुश्री अनीता ए. जी.) केरल उच्च न्यायालय भवन, कोच्ची
12 लायर्स कालेक्टिव (सुश्री इंदिरा जैयसिंह), जंगपुरा विस्तार, नई दिल्ली
13 रक्षक फाउंडेशन, श्री सचिन बंसल, यूएसए
14 एडब्ल्यूएजी, इला पाठक, अहमदाबाद
15 एआईडीडब्ल्यूए (सुश्री कीर्ति सिंह) लीगर कनवेनर, अधिवक्ता, दिल्ली
16 पीएलडी (पाटनर्स फार ला इन डेवेलपमेंट) मधु मेहरा, पूर्व निदेशक, नई दिल्ली
17 भारत विकास परि-द (श्री राज पाल सिंघला, अध्यक्ष) चंडीगढ़, पंजाब
18 श्री एस. के. दुलारा, ऑल इंडिया मुस्लिम फ्रंट, ''रहमान प्लाजा'' वाईएमसीए लेन, अबीड्स, हैदराबाद
19 मोहम्मद अब्दुल राउफ (सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश, हैदराबाद) ऑल इंडिया मुस्लिम फ्रंट, ''रहमान प्लाजा'' वाईएमसीए लेन, अबीड्स, हैदराबाद
20 बिमल एन, पटेल, निदेशक, जीएलएनयू, गांधीनगर, गुजरात

21 प्रो. रणबीर सिंह, वाइस-चांसलर, नेशनल ला यूनिवर्सिटिज, दिल्ली

22 पीएमएस नारायण, नेशनल कमीशन फार माइनोरिटी, खान मार्केट, नई दिल्ली

23 जनामित्रम जनाकिया नेदी वेदी, केरल राज्य कमेटी, पूर्व कोट्टापरंबा, कोझीकोड

24 न्यायमूर्ति अमरबीर सिंह गिल, चेयरमैन, पंजाब स्टेट लॉ कमीशन, चंडीगढ़

ग. भा. दं. सं. की धारा 498-क की प्रश्नावली का उत्तर देने वाले सरकारी अधिकारियों की सूची

1 प्रभात कुमार अधिकारी, सचिव (विधि) ए एंड एन प्रशा. पोर्टब्लेयर
2 *निजी सचिव (लॉ-लेजिसलेशन) हिमाचल प्रदेश सरकार
3 एल. एम. संगमा, सचिव, मेघालय सरकार, विधि विभाग
4 बी. के. श्रीवास्तव, सचिव प्रभार, विधि विभाग, पश्चिम बंगाल सरकार
5 थेजेगु-यू-कीरे, डिप्टी लीगल रीमेमबरेंस, नागालैंड सरकार, कोहिमा
6 अरिंधम पॉल, डीएलआर एंड डिप्टी सेक्रेटरी, लॉ, त्रिपुरा
7 *गृह सचिव, चंडीगढ़ प्रशासन
8 श्री हरि एस. डी. शिरोधकर, अवर सचिव, विधि विभाग, गोवा सरकार
9 श्री एस. जी. माराथे, संयुक्त सचिव (विधि) गोवा सरकार
10 श्री प्रमोद कामत, विधि सचिव, गोवा सरकार
11 श्री डी. वी. के. राव, अवर सचिव, मिनिस्ट्री आफ वुमेन एंड चाइल्ड डेवेल्पमेंट, भारत सरकार
12 श्री जी. राइमो, उप सचिव (गृह), डिपार्टमेंट आफ होम एंड इंटर स्टेट बोर्डर अफेयर्स, अरुणाचल प्रदेश सरकार, इटानगर
13 श्री हरीशशंकर वैश्य, अपर सचिव, मध्य प्रदेश सरकार

* नाम का उल्लेख नहीं किया गया

घ. भा. दं. सं. की धारा 498-क की प्रश्नावली का उत्तर देने वाले न्यायिक अधिकारियों/अन्य अधिकारियों की सूची

सर्व श्री/श्रीमती

1 चंडीगढ़ जुडिसियल एकेडमी, डा. वीरेन्द्र अग्रवाल, डायरेक्टर (एकेडमीक्स), चंडीगढ़

2 एम. एम. बनर्जी, जिला न्यायाधीश, वीरभूम, सुरी

3 अभय कुमार, रजिस्ट्रार, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर (आन वीहाफ आफ जुडिसियल आफिसर्स, ट्रेनिंग इंस्टीच्युट)

4 नुगंशीटोम्बी अथोकपम, डिप्टी लीगल रीमेंमबरेंस, मणिपुर सरकार

5 विजय कुमार सिंह, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जम्मू

6 श्रीकांत डी. बाबालडी, डिस्ट्रीक्ट जज मेंबर, कर्नाटक अपीलेट ट्रीब्यूनल, बंगलौर

7 बीजेन्द्र कुमार सिंह, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, गोपालगंज, बिहार

8 आर. के. वाटैल, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, रेआसी (जेएंडके)

9 प्रिंसिपल, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, किस्तवार

10 एस. एन. केम्पागॉदर, डिक्ट्रीक्ट जज मेंबर, कर्नाटक अपीलेट ट्रीब्यूनल,बंगलौर

11 उदयान मुखोपाध्याय, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, पूर्वी मिदनापुर

12 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, वैशाली, हाजीपुर

13 एस. एच. मित्तालकोड, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, एआईजी-1, मिजोरम सरकार

14 रंजीत कुमार बेग, जिला जज, मालदा पश्चिम बंगाल

15 संजीत मजुमदार, अपर जिला एव सत्र न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल

16 अनंत कुमार कापरी, अपर जिला एंव सत्र न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल

17 कौशीक भट्टाचार्य, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल

18 सुबोध कुमार बाटाबयाल, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल

19 श्री गोपाल चंद्र करमाकर, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल

20 संजय मुखोपाध्याय, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मालदा,

पश्चिम बंगाल

21 सिबासीस सरकार, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल

22 सब्यासाही चट्टोराज, सिविल जज (सीनियर डिविजन), मालदा

23 इशाल चंद्र दास, जिला जज, बर्द्धमान

24 एल, के. गौर, विशे-ा न्यायाधीश, सीबीआई-9, तीस हजारी कोर्ट्स, दिल्ली

25 एम. के. नागपाल, ए.एस.जे./विशे-ा न्यायाधीश, एनडीओएस, दक्षिण एवं दक्षिण पूर्व जिला सकेत कोर्ट्स, नई दिल्ली

26 डा. नीरा भरिहोके, एडीजे-पांच, दक्षिण, साकेत कोर्ट, नई दिल्ली

27 संजीव कुमार, मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, दक्षिण-साकेत कोर्ट, नई दिल्ली

28 चेतना सिंह, मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, दक्षिण-साकेत कोर्ट, नई दिल्ली

29 संदीप गर्ग, मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, दक्षिण-साकेत कोर्ट, नई दिल्ली

30 अणु अग्रवाल, सिविल जज, दक्षिण-साकेत कोर्ट, नई दिल्ली

31 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, अंबाला

32 एस. एस. लांबा, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, रोहतक

33 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फतेहबाद

34 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, रेवाड़ी

35 आर. एस. वीर्क, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, गुड़गांव

36 के. सी. शर्मा, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, पानीपत

37 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कैथल

38 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जिंद

39 दीपक अग्रवाल, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जिंद

40 डी. एन. भारद्वाज, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जिंद

41 डा. चंद्र दास, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, जिंद

42 प्रवीण कुमार, अपर सिविल जज (सिनियर डिविजन-कम-सब-डिविजन जुडिसियल मजिस्ट्रेट), साफीडन

43 कुमुद गंगवाणभ्, सब-डिविजन, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, नरवाना

44 गुरविन्दर सिंह गिल, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फतेहगढ़ साहीब

45 राज राहुल गर्ग, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, करनाल

46 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, भिवानी

47 नरेन्द्र कुमार, जिला जज (फैमिली कोर्ट) भिवानी

48 राजिन्दर गोयल, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, भिवानी
49 राजेश कुमार भांखर, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भिवानी
50 तरुण सिंघल, मुख्य न्यायाधीश (जुनियर डिविजन) भिवानी
51 नरेन्द्र सिंह, मुख्य न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, भिवानी
52 रजनी यादव, अपर सिविल जज (सिनियर डिविजन)-कम-सब-डिविजनल जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, भिवानी
53 बलवंस सिंहस, सिविल जज (जुनियर डिविजन)-कम-सब डिविजनल जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, भिवानी
54 नरेन्द्र शर्मा, सब डिविजन जुडिसियल मजिस्ट्रेट, चरखी दादरी
55 ए. एस. नायर, सिविल जज (जुनियर डिविजन), चरखी दादरी
56 प्रवेश सिंघला, सिविल जज, चरखी दादरी
57 कुलदीप जैन, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सोनीपत
58 संजीवक कुमार, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सोनीपत
59 गुलाब सिंह, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सोनीपत
60 विवेक भारती, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सोनीपत
61 ऋतु गर्ग, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सोनीपत
62 लाल चंद, सिविल जज (सिनियर डिविजन)-कम-एसीजेएम, सोनीपत
63 मधुलिका, सी. जे. (जे.डी.)-कम-जेएमआईसी, सोनीपत
64 रंजना अग्रवाल, अपर सिविल (सीनियर डिविजन), सोनीपत
65 राजेश कुमार यादव, सी.जे.(सीनियर डिविजन)- कम-जेएमआईसी, सेनीपत
66 हरीश गुप्ता, अपर सिविल (सीनियर डिविजन), गनौर
67 के. पी. सिंह, अपर सिविल (सीनियर डिविजन), गोहाना
68 संजीव जिन्दल, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, नरनौल
69 रजनीश बंसल, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, नरनौल
70 सुधी जीवन, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, नरनौल
71 प्रवीण गुप्ता, अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, नरनौल
72 चन्द्र हास, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, नरनौल
73 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, गुरदासपुर
74 राजेश कुमार यादव, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सी.जे.(जेडी)-सह-जेएमआईसी, सोनीपत
75 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़

76 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सिरसा
77 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, झज्जर
78 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फरीदाबाद
79 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, यमुना नगर, जगधरी
80 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, पंचकुला
81 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, पेहोवा
82 राजेन्द्र पाल सिंह, अपर सिविल जज (सीनियर डिविजन), पेहोवा
83 गुरचरण सिंह सारन, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, शहीद भगत सिंह नगर
84 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, रूपनगर
85 इन्द्रजीत सिंह, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जालंधर
86 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फिरोजपुर
87 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कपुरथला
88 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मनसा
89 अमिल कुमार गर्ग, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, कुरुक्षेत्र
90 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र
91 मनी-न बत्रा, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश,कुरुक्षेत्र
92 हरलीन शर्मा, सिविल जज (जुनियर डिविजन), कुरुक्षेत्र
93 संजीव कुमार, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र
94 संजीव आर्य, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, कुरुक्षेत्र
95 अरुण कुमार सिंघल, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र
96 जगजीत सिंह, सिविल जज (सिनियर डिविजन), कुरुक्षेत्र
97 अमरीन्दर शर्मा, सिविल जज (जुनियर डिविजन), कुरुक्षेत्र
98 राज गुप्ता, सिविल न्यायिक जज, कुरुक्षेत्र
99 अणुदीप कौन भट्टी, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, कुरुक्षेत्र
100 अक्षदीप महाजन, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, मोहिन्दरगढ़
101 नरेन्दर पाल, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, नरनौल
102 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, हिसार
103 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, अमृतसर
104 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, पटियाला
105 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, होशियारपुर
106 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, लुधियाना
107 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, भटिंडा
108 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, श्री मुक्तसर साहिब

109 श्री एस. सिवाय नायडु, महारजिस्ट्रार, आंध्र प्रदेश सरकार
110 श्री जे. पी. गुप्ता, निदेशक (जेओटीआरआई) मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर
111 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, किन्नौर, रामपुर बुशाहर, हि.प्र.
112 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सिमौर, नाहन, हि. प्र.
113 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कांगरा, धर्मशाला, हि. प्र.
114 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, उना, हि. प्र.
115 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, हमीरपुर, हि. प्र.
116 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बिलासपुर, हि. प्र.
117 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सोलन, हि. प्र.
118 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कुल्लु, हि. प्र.
119 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मंडी, हि. प्र.
120 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, चंबा, हि. प्र.
121 निदेशक, हि. प्र. जुडिसियल एकेडमी, हि. प्र.

कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलौर के महारजिस्ट्रार कार्यालय से

122 श्री एस. हरीश कुमार, प्रिंसिपल, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, चित्रदुर्गा, कर्नाटक
123 श्री शिवशंकर बी. अमरानावर, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बगलकोट, कर्नाटक
124 श्री लक्षमण एफ, मालावल्ली, छह अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मैसूर, कर्नाटक
125 श्री टी. जी. चन्नाबसप्पा, प्रिजाइडिंग ऑफिसर, फास्ट ट्रैक कोर्ट, तीन, मैसूर, कर्नाटक
126 श्री नरेन्द्र कुमार गुनाकी, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, उडूपी, कर्नाटक
127 डा. शशीकला एम ए उरनकर, प्रिंसिपल जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बीदार, कर्नाटक
128 श्री जॉन माइकल कुन्हा, प्रिजाइडिंग ऑफिसर, केएसटीएटी, बंगलौर, कर्नाटक
129 जिला एवं सत्र न्यायालय, कोप्पल, कर्नाटक
130 श्री प्रदीप डी. वेनगाकर, मुख्य न्यायाधीश, कोर्ट आफ स्माल काउजेज, बंगलौर
131 श्री एल. सुब्रामण्या, प्रिंसिपल जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बिजापुर
132 श्री एस. वी. कुलकर्णी, प्रिजाइडिंग ऑफिसर एवं अपर सेशन जज,

(एड हाक) फास्ट ट्रैक कोर्ट, जमाखंडी, जिला बगलकोट, कर्नाटक

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर के महारजिस्ट्रार कार्यालय से

133 श्री आर. सी. एस. सामंत, निदेशक, छत्तीसगढ़ स्टेट जुडिसियल एकेडमी, बिलासपुर
134 श्री अशोक पांडा, जिला जज, दुर्ग, छत्तीसगढ़
135 श्री अशोक कुमार साहू, अतिरिक्त जिला एवं सेशन्स जज, दुर्ग
136 श्री कमलेश जगडल्ला, अतिरिक्त जज, प्रथम श्रेणी, दुर्ग
137 श्री वेनसेसलस टोप्पो, सिविल जल, द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
138 सुश्री छाया सिंह बागेल, मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
139 श्रीमती स्वर्ण्लता टोप्पो, सिविल जज, प्रथम श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
140 श्री श्रीकांत श्रीवास, आफिसर, प्रथम श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
141 श्री थोमस इक्का, सिविल जज, द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
142 श्री अनीश दुबे, सिविल जज, प्रथम श्रेणी, राजहारा, छत्तीसगढ़
143 श्री विवेक कुमार तिवारी, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जिला बालोड, छत्तीसगढ़
144 श्री दीपक कुमार कौशल, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, बामेतारा, जिला दुर्ग, छत्तीसगढ़
145 श्री प्रवीण कुमार प्रधान, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, बामेतार, जिला दुर्ग, छत्तीसगढ़
146 सुश्री पु-पलता मार्केण्डे, सिविल जज, द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
147 श्री जितेन्द्र कुमार जैन, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, दुर्ग, छत्तीसगढ़
148 श्री संतो-न ठाकुर, सिविल जल द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
149 श्री मनी-न कुमार दुबे, सिविल जज, द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
150 श्री अभि-ेक शर्मा, न्यायाधीश द्वितीय श्रेणी, छत्तीसगढ़
151 श्रीमती श्यामावती भारवी, सिविल न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
152 सुश्री ममता शुक्ला, सिविल जज, द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
153 श्रीमती सु-ामा लकड़ा, सिविल जज, द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
154 श्री अशोक कुमार लाल, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
155 सुश्री यशोदा कश्यप, सिविल जज, द्वितीय श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़
156 श्री जितेन्द्र ठाकुर, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, दुर्ग, छत्तीसगढ़

157 श्री संदीप बकशी, जिला एवं सेशन्स न्यायाधीश, रायपुर
158 श्रीमती अनिता झा, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बिलासपुर, छत्तीसगढ़
159 श्री सी. बी. बाजपेयी, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, महासमुंद, छत्तीसगढ़
160 श्री अनिल कुमार शुक्ला, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, धमतरी
161 श्री गौतम चौरदिया, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जंजगीर, चम्पा, छत्तीसगढ़
162 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सरगुजा, अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़
163 श्रीमती, विमला सिंह कपूर, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोरिया, बैकुंठपुर, छत्तीसगढ़
164 श्री आई एस उबोजेबा, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बस्तर, जगादलपुर, छत्तीसगढ़
165 श्रीमती सत्यभामा अजय दुबे, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, उत्तर बस्तर, कनकर, छत्तीसगढ़
166 श्री एन. एस. पटेल, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, भानुप्रताप पुर, कनकर, छत्तीसगढ़
167 श्री जे एस पटेल, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जिला एन बी कनकर, छत्तीसगढ़
168 श्री शिव मंगल पांडो, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, रायगढ़, छत्तीसगढ़
169 श्री प्रभात कुमार शास्त्री, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जशपुर, छत्तीसगढ़
170 श्री एम पी सिंछल, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, रजनादगॉव, छत्तीसगढ़
171 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोरबा, छत्तीसगढ़
172 श्री ए. के. बेक, जेएफएमसी (साउथ बस्तर दंतेवाड़ा), छत्तीसगढ़
173 श्रीमती अनिता धारिया, अतिरिक्त जेएफएम, दंतेवाड़ा, छत्तीसगढ़
174 श्री रामजीवन देवगन, सिविल जज, प्रथम श्रेणी, बिजापुर, छत्तीसगढ़
175 श्री वी. के. चाणक्य, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, साउथ बस्तर, दंतेवाड़ा, छत्तीसगढ़
176 श्रीमती योगिता विनय वासनिक, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, साउथ बस्तर, दंतेवाड़ा

177 श्री यशवंत वासनिक, सिविल जज, प्रथम श्रेणी, सुकमा, छत्तीसगढ़
178 श्री बलराम कुमार देवगन, जिला मजिस्ट्रेट, द्वितीय श्रेणी, बचेली, दंतेवाड़ा
179 श्री अमृत केरकट्टा, सिविल जज, प्रथम श्रेणी, साउथ बस्तर, जिला कोंटा, छत्तीसगढ़
180 श्रीमती अणुराधा खरे, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कबीरधाम, छत्तीसगढ़

झारखंड उच्च न्यायालय, रांची (झारखंड) से

181 श्री अनिल कुमार चौधरी, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बोकारो, झारखंड
182 मोहम्मद मुस्ताक अहमद, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, चतरा, झारखंड
183 श्री राजेश कुमार दुबे, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सिंहभूम, देवघर, झारखंड
184 श्री अमिताभ कुमार गुप्ता, प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, देवघर, झारखंड
185 श्री सत्येन्द्र कुमार सिंह, प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, धनबाद, झारखंड
186 प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, आई/सी दुमका, झारखंड
187 श्री शिव नारायण सिंह, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, गढ़वा, झारखंड
188 श्री प्रदीप कुमार श्रीवास्तव, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, गिरिडीह, झारखंड
189 श्री कामेश मिश्रा, आई/सी जिला एवं सत्र न्यायाधीश, गोड्डा, झारखंड
190 श्री ओम प्रकाश पांडे, प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, गुमला, झारखंड
191 श्री दीपक कुमार, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, जमशेदपुर, झारखंड
192 श्री बृजेश बहादुर सिंह, सचिव, डीएलएसए, सिविल कोर्ट्स, जमशेदपुर, झारखंड
193 श्री एस. एस. प्रसाद, सब-डिविजनल जुडिसियल मजिस्ट्रेट, जमशेदपुर, झारखंड
194 श्री के. के. श्रीवास्तव, रजिस्ट्रार/जज-इन-चार्ज-कम-जे.एम., प्रथम श्रेणी, सिविल कोर्ट, जमशेदपुर, झारखंड
195 श्रीमती संजीता श्रीवास्तव, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी,

जमशेदपुर, झारखंड

196 श्रीमती काशीका एम प्रसाद, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, झारखंड

197 श्री राकेश कुमार सिंह, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, झारखंड

198 श्री तौफीक अहमद, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, झारखंड

199 श्री अरुण कुमार दुबे, जुडिसियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, झारखंड

200 श्री अनिल कुमार दुबे, अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, जमशेदपुर, झारखंड

201 श्री दिनेश कुमार, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, झारखंड

202 श्री सचिन्द्र नाथ सिन्हा, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, झारखंड

203 श्री सुरज प्रकाश ठाकुर, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, झारखंड

204 श्री गौतम महापात्रा, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जमतारा

205 श्री अजित प्रसाद वर्मा, प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोडरमा, झारखंड

206 श्री नवीन कुमार, प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, लोहरदगा, झारखंड

207 श्री वि-णु कांत सहाय, प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, पलामु, डालटेनगंज, झारखंड

208 श्री बिनय कुमार सहाय, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, पाकुर, झारखंड

209 श्री राजेश कुमार, वैश, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, साहिबगंज, झारखंड

210 श्री के. के. श्रीवास्तव, प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सरायकेला-खारसावान, झारखंड

211 श्री नरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, सिमडेगा, झारखंड

212 श्री धीरेन्द्र कुमार मिश्रा, प्रशासनिक अधिकारी, जुडिसियल

अकादमी झारखंड, रांची

केरल उच्च न्यायालय से

213 कासरगोड जिला जज केरल
214 वायानंद जिला जज, केरल
215 श्री एम जे. शक्तिधरण, अतिरिक्त जिला जज
216 जिला एवं सत्र न्यायाधीश, मंजेरी, केरल
217 श्री पी. उबैद, जिला जज, पलक्काड, केरल
218 अतिरिक्त जिला जज, अलप्पुझा
219 श्री के. रामाकृ-णन, जिला जज, थोडुफुजा
220 श्री एन. रेवी, जिला जज, पथनमथिट्टा
221 श्री थॉमस पल्लिकापारमपील, जिला एवं सत्र न्यायाधीश
222 मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कासरगोड, केरल
223 श्री के. पी. जॉन, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कोझिकोड, केरल
224 श्री एस. सथीसाचन्द्र बाबू, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, मंजेरी, केरलु
225 मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, पलाक्काड, केरल
226 श्री पी. एस. एंटोनी, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, त्रिसुर, केरल
227 श्री के. ए. राजामोहनन, अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, एर्नाकुलम, केरल
228 अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (ईओ), एर्नाकुलम, केरल
229 श्री बी. विजयान, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, एर्नाकुलम, केरल
230 श्री पी. सी. पॉलाचेन, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, थोडुपुझा, केरल
231 सुश्री इंदुकला एस, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, पाथानामथिट्टा, केरल
232 मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कोललाम, केरल

प्रश्नावली का उत्तर देने वाले पुलिस अधिकारियों की सूची

233 रेनचामो पी. किकों, आई पी एस, डी आई जी, नागालैंड, कोहिमा
234 मृणालनी श्रीवास्तव, पुलिस अधीक्षक, सीआईडी, गंगटोक, सिक्किम
235 उप पुलिस अधीक्षक (हेड क्वार्टर), कार्यालय - डीजीपी अंडमान एंड निकोबार द्वीप, पोर्ट ब्लेयर
236 श्री दीपक पुरोहित, पुलिस अधीक्षक, डीएंडएनएच, सिल्वासा
237 पी. सी. लालछुआनावामा, एआईजी-1 (डीजीपी के लिए) मिजोरम,

एजवाल

238 एस. आर. दास, सहायक पुलिस निरीक्षक (पर्सनल) त्रिपुरा सरकार, अगरतला

239 पुलिस महानिरीक्षक (हेड क्वार्टर) बिहार, पटना

240 पुलिस अधीक्षक, पणजी, गोवा

241 अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक (अपराध), पंजाब चंडीगढ़

242 श्री मंगेश कश्यप, डीसीपी (हेड क्वार्टर), पुलिस आयुक्त का कार्यालय, दिल्ली

243 श्री टी. पचुआ, पुलिस महानिरीक्षक (प्रशा.) पुलिस विभाग, मणिपुर सरकार

244 पुलिस महानिरीक्षक, संघ क्षेत्र, चंडीगढ़

उपाबंध – III क

[रिपोर्ट के पैरा 10.1 को निर्दि-ट करें]

जमानतीयता की बाबत भा. दं. सं. की धारा 498-क की प्रश्नावली के 474 उत्तरों का व्यापक विश्ले-ण

	*व्यक्तिगत	संगठन/ संस्थान**	सरकारी अधिकारी	सरकारी/ न्यायिक अधिकारी	कुल जोड़
जमानतीय	83	14	3	100	200
अजमानतीय	4	5	8	109	126
भागतः जमानतीय	3	3	1	23	30
निरसन	74	0	1	1	76
कोई टिप्पणी नहीं	29	2	0	11	42
कुल	193	24	13	244	474

* दो अनिवासी भारतीय

** यू एस ए का एक संगठन

उपाबंध -3 ख

[रिपोर्ट के पैरा 10.1 को निर्दि-ट करें]

प्राप्त कुछ उत्तरों का सारांश – सूची

श्री न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्त) ए. एस. गिल, अध्यक्ष, पंजाब राज्य विधि आयोग ने यह मत व्यक्त किया कि पति और उसके कुटुम्ब के सदस्यों को गिरफ्तार करने की शक्ति का प्रयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप कुटुम्ब विखंडित हो जाएगा । आरंभ में सुलह, मध्यस्थता और सलाह जैसे विवाद समाधान तंत्र का अनुक्रम लिया जाना चाहिए । दोनों पक्षकारों द्वारा नामित, सम्माननीय व्यक्तियों की सहायता से पुलिस थाना स्तर पर ही पुनर्मिलन का प्रयास करने की प्रकिया आरंभ की जानी चाहिए । राज्य सरकार द्वारा नियुक्त वृत्तिकतः अर्ह सलाहकारों की सहायता लेकर घरेलू हिंसा अधिनियम के अधीन सलाह तंत्र का भी फायदा उठाया जा सकता है । अपराध को जमानतीय और शमनीय बनाया जाना चाहिए । जमानतीयता किसी भी तरह से अलाभकर नहीं होगी । इन मामलों में पुलिस को संवेदनशील बनाने की पूरी आवश्यकता है और केवल अनुभवी अधिकारियों को अन्वे-ण का कार्य सौपा जाना चाहिए । न्यायालय की अनुज्ञा के अधीन रहते हुए शमनीयता की अनुज्ञा दी जानी चाहिए । धारा 498-क के अधीन अभियोजन में कम दो-नसिद्धि का दर का मुख्य कारण यह है कि अभिकथन अतिशयोक्तिपूर्ण और वास्तविक तथ्य से परे होते हैं । महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल में ऐसे व्यक्ति होने चाहिए जो सुशिक्षित और अनुभवी हों और जिनके पास वैवाहिक विवाद से प्रभावी रूप से निपटने की जानकारी हो ।

रा-ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग :

अल्पसंख्यकों के लिए परिकल्पित जागरुकता कार्यक्रमों के माध्यम से आम जनता को शिक्षित कर मुद्दे का बेहतर समाधान किया जा सकता है ।

रा-ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग के सदस्य (डा. एच. टी. संगलियाना और श्री के. एन. दारुवाला)

पुलिस को स्वतंत्र और संतुलित दृ-टिकोण अपनाना चाहिए । सभी मामलों में, सीधे-सीधे मामला दर्ज किए जाने की आवश्यकता नहीं है । मामले को दर्ज करने का विनिश्चय निरीक्षक स्तर के अधिकारी द्वारा किया जा सकता है । धारा 498-क के अधीन मामलों को बड़ी सावधानी से निपटाना चाहिए । परिवाद की वास्तविकता का समाधान होने के पश्चात् ही गिरफ्तारी की जानी चाहिए न कि नैमिकी रीति से । सुलह का प्रयास पूरा होने तक जो तीन सप्ताह से अधिक न हो औपचारिक अन्वे-ण को आस्थगित रखा जा सकता है । गैर-सरकारी संगठन समूहों और पुलिस और न्यायपालिका के सेवानिवृत्त अधिकारियों में से सही मध्यस्थों की पहचान की जा सकती है । कर्नाटक में, पुलिस आयुक्त के परिसर में महिला सहायता केन्द्र उपलब्ध हैं । रजिस्ट्रीकरण के पश्चात् समझौते के लिए सहमत पक्षकारों के लिए शमन हेतु न्यायालय की अनुज्ञा ली जाए । यदि कोई मृत्यु न हुई हो तो इसे जमानतीय बनाया जाए । ऐसे अभियुक्त को जमानत दी जानी चाहिए यदि उसकी आयु 60 व-र् से अधिक है और कोई प्रत्यक्ष अंतर्वलन साबित नहीं किया गया है । निःशुल्क विधिक सहायता सेल ऐसी सहायता की उपलब्धता को टक्कर देने के लिए उपयोगी होगा जब बात संदेहास्पद हो । मामलों का अधिक समय तक लंबित रहना परिवादकारों को मामले में आगे पैरवी करने से हतोत्साहित करता है ।

श्री दारुवाला

गिरफ्तार करने से पहले विस्तृत जांच आवश्यक है । तथापि, महिलाओं की शारीरिक सुरक्षा सुनिश्चित की जानी चाहतिए । प्रसामान्यतः वारंट से ही गिरफ्तारी की जानी चाहिए । वारंट के बिना गिरफ्तारी के लिए पुलिस को कारण अभिलिखित करना चाहिए फिर भी जमानत विरले ही मंजूर की जानी चाहिए । प्रत्येक जिले में प्रशिक्षित महिला पुलिस द्वारा सज्जित पुलिस और दहेज विरोधी सेल बनाया जाना चाहिए । सुलह और अन्वे-ण की दो प्रक्रियाएं साथ-साथ आरंभ की जानी चाहिए । अपराध को शमनीय बनाया जा सकता है । निचले स्तर पर महिलाएं विधिक सेवा प्राधिकारणों के समक्ष आसानी से नहीं पहुंच सकती हैं । मीडिया के माध्यम से जागरुकता फैलाने के उपाय किए जाने चाहिए और इसे स्कूल पाठ्यक्रम का भी भाग बनाया जा सकता है ।

डा. रणवीर सिंह, उपकुलपति (एन एल यू दिल्ली की ओर से) – यह इंगित करने का पर्याप्त साक्ष्य है कि कई तरीकों से इस धारा का दुरुपयोग किया गया है । तथापि, दुरुपयोग उस सिद्धांत और आशय से निःसृत नहीं होता जिस पर यह विधि आधारित है । विधि को कार्यान्वित करने के लिए भरपूर प्रयास किया जाना चाहिए जिससे कि विधि के सामाजिक उद्देश्य को क्षति न पहुंचे । डी. के. बसु [(1971) 1 एस. सी. सी. 416] वाले मामले में विकसित गिरफ्तारी की विधि के कठोर पालन पर बल देकर दुरुपयोग या मिथ्या उलझनों को कम किया जा सकता है । दूसरा, इस विधि के अधिदेश को दंडात्मक से प्रत्यास्थपन प्रयोजन के लिए परिवर्तित किया जाना चाहिए । पहली नजर में मध्यस्थता और सुलह का अनुक्रम सर्वोत्तम विचार है । गिरफ्तारी और अन्य ठोस विधिक उपाय तब अपनाए जाने चाहिए जब प्रत्यास्थपन के विलक्प असफल हो जाएं । मामले को दर्ज करना पुलिस की विधिक बाध्यता है किन्तु उन्हें गिरफ्तार करने के लिए असम्यक् जल्दबाजी में कार्य करने की आवश्यकता नहीं है । उन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 के भाव द्वारा मार्गदर्शित होना चाहिए । अभिकथित क्रूरता के कार्य की गंभीरता के आधार पर धारा 498-क के अधीन अपराध को दो प्रवर्गों में विभाजित करना श्रेयस्कर होगा । तब अपराध को जमानतीय या अजमानतीय में प्रवर्गीकृत किया जा सकता है । कम तीव्रता के अपराध को पारिवारिक वैमनस्य माना जाए और सुलह प्रक्रिया के सोच द्वारा निपटाया जाए । कानूनी निकायों और गैर-सरकारी संगठनों को अंतर्वलित कर जागरुकता युक्त कार्यक्रम आयोजित किया जाए । महिला पुलिस थाने के अधिकारियों को पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ।

डा. बिमल पटेल, निदेशक, जी एन एल यू गांधीनगर, गुजरात – पुलिस को मामले का अन्वे-ण करना चाहिए और धारा 498-क के अधीन अपराध किए जाने के समाधान पर ही उन्हें गिरफ्तारी के बारे में सोचना चाहिए । अपराध को जमानतीय बनाने से कुछ हद तक समस्या का हल हो जाता है यद्यपि इसके संबंध में भिन्न-भिन्न मत है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437 का भी आश्रय लिया जा सकता है । अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जा सकता है । विधिक सेवा प्राधिकरण और पुलिस के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिए । सी डब्ल्यू सी निरीक्षक स्तर महिला अधिकारी के नियंत्रण में होना चाहिए ।

न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान, जबलपुर –

1. पुलिस को धारा 498-क के अधीन अपराध किए जाने का अभिकथन करने वाली प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने पर आपराधिक मामला दर्ज करना चाहिए किन्तु उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 के अधीन अनुध्यात दो शर्तों को ध्यान में रखते हुए अन्वे-ण आरंभ करना चाहिए ।

   विवादों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित पति या अन्य नातेदारों की सीधे गिरफ्तार करने के बजाय प्रारंभिक अन्वे-ण किया जाना चाहिए । पति और अन्य सगे नातेदारों की तत्काल गिरफ्तारी हमेशा के लिए विवाद के सौहाद्रपूर्ण समाधान की संभावना को न-ट कर देगा ।

2. पुलिस अधिकारी अन्वे-ण आरंभ कर सकता है किन्तु गिरफ्तारी, आदि के द्वारा कठोर उपाय करने के पूर्व, विख्यात गैर-सरकारी संगठनों या सरकारी मध्यस्थ केन्द्रों द्वारा चलाए जा रहे परामर्श केन्द्रों की सहायता से सुलह की प्रक्रिया आरंभ की जानी चाहिए । संबद्ध पुलिस अधिकारी को डी एल एस ए या टी एल एस ए से संपर्क करना चाहिए जिससे कि प्राधिकारी सुहल के कार्य की व्यवस्था करने का उपाय कर सके ।

3. अपराध को गिरफ्तार करने में पुलिस की सतर्कता दृ-टि के साथ अजमानतीय बना रहने दिया जाना चाहिए । दुरुपयोग या अति विवक्षा अपराध को जमानतीय बनाने का आधार नहीं हो सकता है क्योंकि यह धारा 498-क के प्रयोजन को विफल करेगा ।

4. परामर्श/मध्यस्थ प्रक्रियाएं अधिमानतः पति और पत्नी की उपस्थिति की तारीख से दो मास के भीतर पूरी की जानी चाहिए । यदि पति कुटुम्ब परामर्श केन्द्र से जारी नोटिस का उत्तर नहीं देता या परामर्श की प्रक्रिया में सहयोग प्रदान नहीं करता तो ही अन्वे-नक अधिकारी को परामर्शदाताओं/मध्यस्थों

से रिपोर्ट प्राप्त होने के पश्चात् विधि के अनुसार गलत पक्षकार के विरुद्ध कार्यवाही आरंभ करनी चाहिए । सौहाद्रपूर्ण समाधान के पश्चात्, आपराधिक मामले की आगे की कार्यवाही रोक दी जाएगी और मामला बंद कर दिया जाएगा ।

5. पुलिस को सुलह की वास्तविक प्रक्रिया में अंतर्वलित नहीं होना चाहिए । प्रत्येक जिले में वृत्तिक परामर्शदाताओं से युक्त कुटुम्ब परामर्श केन्द्र स्थापित किया जाए । मध्यस्थ केन्द्र भी वैवाहिक विवादों का समाधान करने में सहायक हैं ।

निदेशक, हिमाचल प्रदेश न्यायिक अकादमी, शिमला – भा. दं. सं. की धारा 498-क को लिंग तटस्थ बनाया जाए । धारा 498-क को आपराधिक मामले से हटाया जाना चाहिए । क्योंकि यह पारिवारिक मामला है और क्योंकि इसके कई प्रतिकूल परिणाम होंगे । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के पश्चात् पुलिस रिपोर्ट का फाइल किया जाना तीन मास में पूरा किया जाना चाहिए और न्यायालय कार्यवाहियां इसके पश्चात् एक व-र्ा के भीतर पूरी की जानी चाहिए ।

डा. नीरा भरिहोक, एडीजे, दिल्ली – तत्काल गिरफ्तारी न की जाए और यह अंतिम सहारा होना चाहिए । इसे जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । सी डब्ल्यू सी के ऊपर सलाहकारी निकाय होना चाहिए । विधिक सेवा प्राधिकरण को जागरुकता फैलानी चाहिए ।

डा. नीरा गुप्ता – धारा 498-क के अधीन अपराधों को असंज्ञेय, जमानतीय बनाया जाए । ऐसे व्यक्ति जो उपबंध का दुरुपयोग करते हैं, को उसी न्यायालय द्वारा विचारण पूरा होने पर दंडित किया जाएगा । इस प्रयोजन के लिए पृथक् उपबंध लाया जाए । 10 लाख रुपए का भारी जुर्माना लगाया जाए । ऐसे व्यक्ति जो व्यक्तिगत दुश्मनी निभाने के लिए महिला-संरक्षण विधि का उपयोग करते हैं, को दंडित किया जाए । धारा को लिंग तटस्थ बनाया जाए । पुलिस को परामर्श व्यवस्था से दूर रखा जाए ।

महिला और बाल विकास मंत्रालय, भारत सरकार – महिला के संरक्षण अनुकूल विधि से छेड़छाड़ न किया जाए ; तथापि यदि कुछ स्थिर प्रक्रियाओं को पालन किया जाता है तो दुरुपयोग को रोका जा सकता है । अभिकथन मात्र पर कोई गिरफ्तारी नहीं की जानी चाहिए । वैवाहिक विवादों में, सभी मामलों में गिरफ्तार करने की शक्ति का तत्काल प्रयोग करना आवश्यकत नहीं हो सकता है । समझौता तंत्र पहला अनुक्रम होना चाहिए । पक्षकारों को वृत्तिक अर्ह परामर्शदाताओं द्वारा परामर्श दिया जाना चाहिए और पुलिस को ऐसे व्यक्तियों की सूची बनानी चाहिए । पुलिस थानों और सी ए डब्ल्यू सेलों में महिला डेस्क बनाया जाना चाहिए ।

अधिवक्ता सामूहिक रूप से (सुश्री इन्दिरा जयसिंह, वरि-ठ अधिवक्त, नई दिल्ली) – पुलिस को विद्यमान विधियों और दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन विनिर्दि-ट प्रक्रिया के अनुसार कार्रवाई करनी चाहिए । इसे अजमानतीय और अशमनीय बना रहने दिया जाए । एल एस ए और पुलिस थाने के बीच समन्वय को मजबूर करने की आवश्यकता है । कार्रवाई की पारदर्शिता और जवाबदेही सुरक्षोपाय के रूप में कार्य कर सकते है । एसे मामलों के लिए कर्मचारियों की कम संख्या और अप्रशिक्षित सीएडब्ल्यू सेल सहायक नहीं हो सकते हैं । पुलिस बल को आधारभूत मानवीय मूल्यों से अनुप्रमाणित करने और संवैधानिक भावनाओं से संवेदनात्मक बनाने की आवश्यकता है ।

सुश्री नागरत्न ए., सहायक प्रोफेसर, विधि, एनएलएसआईयू ; बंगलौर –अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के शीघ्र पश्चात् पुलिस को अन्वे-ण आरंभ करना चाहिए और प्रथमदृ-ट्या मामले के अस्तित्व का पता लगाना चाहिए । किसी भी तरह से पुलिस को मजिस्ट्रेट के वारंट के बिना अभियुक्त को गिरफ्तार करने की शक्ति नहीं होगी । पति के वृद्ध माता-पिता और बहनों तथा अन्य नातेदारों को अनावश्यक गिरफ्तारी के बुरे-प्रभाव से बचा दिया जाना चाहिए । गिरफ्तारी के प्रयोजन के लिए, अपराध को असंज्ञेय बनाया जाए ; किन्तु अन्वे-ण के प्रयोजन के लिए, इसे संज्ञेय बना रहने दिया जाए जिससे कि अन्वे-क अधिकारी असंज्ञेय अपराध की तरह किसी मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा की प्रतीक्षा किए बिना अन्वे-ण आरंभ कर सके । दूसरा, अन्वे-क अधिकारी को संशोधित दंड प्रक्रिया संहिता में

अधिकथित शर्तों को पूरा करने के पश्चात् ही गिरफ्तारी करने की शक्ति महिला निरीक्षकों द्वारा की जाएगी । एलएसए अन्वे-ण पूर्व और विचारण प्रक्रम पूर्व सुलह की भूमिका निभा सकते हैं ।

ए आई डी डब्ल्यू ए (सुश्री कीर्ति सिंह, दिल्ली)

समय से कार्रवाई करने और उचित दिशा में मामले का अन्वे-ण करने की पुलिस की असफलता पर टिप्पणी की गई है । पुलिस को विद्यमान विधि के अनुसर कार्य करना चाहिए और इन परिवादों के बारे में सचेत रहने के किसी निदेश की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे पहले ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में काफी समय लेते हैं । यदि महिला शारीरिक हिंसा की शिकायत करती है तो उसे तत्काल चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराई जानी और पति/ससुराल वालों से हिंसा का और कार्य करने से रोका जाना चाहिए यदि आवश्यक हो तो उसे गिरफ्तार किया जाए । अभिरक्षीय पूछताछ अच्छे परिणाम होते हैं । पुलिस को चिकित्सीय सलाह उपलब्ध कराकर और/या उसे आश्रयगृह भेजकर पीड़िता महिला की सहायता करनी चाहिए । ब्लाक और जिला स्तर पर आपदा केन्द्र गठित किया जाना चाहिए ।

अपराध की गंभीरता को इस जमानतीय और शमनीय बनाकर कम नहीं किया जाना चाहिए । न्यायालय की अनुज्ञा से भी इसे शमनीय बनाने का परिणाम महिला को समझौते के लिए अधिक दबाव डालना होगा । किसी भी दशा में, यदि समझौता हो जाता है तो इसे आपराधिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए न्यायालय से मान्यता प्राप्त होती है । सुलह की बात महिला पर नहीं थोपी जानी चाहिए । दोनों पक्षकारों से सर्वप्रथम सुलह का प्रयास करना दो-नपूर्ण होगा । प्रशिक्षित सलाहकारों द्वारा सुलह का तभी अवलंब लिया जाना चाहिए यदि महिला के अधिकारों और स्थिति पर समझौता किए बिना किया जा सकता है और यदि महिला मामले को सुलझाने के लिए दहेज/स्त्रीधन की वापसी चाहती है ।

नियमित पुलिस थानों को अपवर्जित कर सी डब्ल्यू सी को अन्वे-ण का कार्य सौंपना उपयुक्त नहीं होगा । अनुभव दर्शाता है कि सी डब्ल्यू सेल सकारात्मक नहीं रहे हैं । पुलिस थानों की संख्या बढ़ाई जाए और कार्मिकों को उचित प्रशिक्षण दिया जाए । सी डब्ल्यू सी की प्रधान महिला डीसीपी होनी चाहिए ।

के एफ डब्ल्यू एल (अध्यक्ष, सुश्री के. देवी अधिवक्त), कोच्ची : यह अजमानतीय बना रहे किन्तु न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाए । तत्काल गिरफ्तारी तभी की जाए यदि अपराध गंभीर हो और पीड़िता के जीवन, अंग या स्वास्थ को प्रभावित किया हो । एल एस ए और पुलिस के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिए । प्रत्येक जिले में महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल वांछनीय है और इसका प्रधान आई ए एस अधिकारी होना चाहिए । पुलिस कार्मिकों के अलावा स्थानीय निकायों, गैर-सरकारी संगठनों, एल एस ए, मानसिक स्वास्थ्य विशे-ज्ञों के नामिती इसके सदस्य होंगे ।

रक्षक फाउन्डेशन (श्री सचिन बंसल, सान्ता क्लारा यूएसए) – इसे जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । अन्वे-ण के पहले कोई गिरफ्तारी न की जाए । एल एस ए और पुलिस के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिए । समयबद्ध सीमा के भीतर मामलों के निपटान के लिए त्वरित निपटान न्यायालय खोले जाएं ।

श्री प्रियंक पारेख, मैनचेस्टर, यूएसए : पुलिस पूरी तरह से अन्वे-ण करे और तत्काल गिरफ्तार न करे, इसे जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । सुप्रशिक्षित पुलिस अधिकारी युक्त सी डब्ल्यू सी वांछनीय है ।

डा. वीरेन्द्र अग्रवाल, निदेशक (एकेडेमी) चंडीगढ़ – इसे अजमानतीय बनाया जाए । इसे अजमानतीय और अशमनीय बना रहने दिया जाए । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने पर, पुलिस को कोई कार्रवाई करने के पहले मामले की असलियत का पता लगाने के लिए नातेदारों, पड़ोसियों, आदि से प्रारंभिक जांच करनी चाहिए । एल एस ए यह विनिश्चित कर सकते हैं कि क्या मामले का निपटान आपराधिक मामले के रूप में किया जाए या वैवाहिक सिविल विधि की परिधि के भीतर । सी डब्ल्यू सी को केवल नियमित अन्वे-ण अभिकरणों की सहायता करनी चाहिए ।

श्री सिवैया नायडू, महारजिस्ट्रार, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय – परिवाद प्राप्त होने पर सुलह के प्रयास किए जाने चाहिए । तत्काल गिरफ्तारी तब तक नहीं की जानी चाहिए जब तक पीड़िता को तत्काल

खतरा न हो या पति भारतीय न्यायालयों की अधिकारिता छोड़ने वाला हो । अपराध को जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । गिरफ्तार करने के पूर्व पक्षकारों के बीच सुलह वांछनीय है और ऐसी सुलह एलएसए की संस्था के माध्यम से की जा सकती है । मध्यस्थों के पैनल कुटुम्ब कल्याण विशे-ोज्ञों और प्रशिक्षित परामर्शदाताओं से मिलकर बनना चाहिए । जिला मुख्यालयों में सी ए डब्ल्यू सेल होना चाहिए और इसकी अध्यक्षता पुलिस उप अधीक्षक रैंक के अधिकारी द्वारा की जाएगी । इस सेल में तैनात महिला पुलिस को महिला से संबंधित विधियों की उचित जागरुकता और जीवन का पर्याप्त अनुभव होना चाहिए ।

श्री अभय कुमार, रजिस्ट्रार, म. प्र. उच्च न्यायालय, जबलपुर : तत्काल गिरफ्तारी नहीं किन्तु मामला दर्ज किया जाए और प्रारंभिक अन्वे-ाण किया जाए । इसे अजमानतीय किन्तु, शमनीय बना रहने दिया जाए । संपूर्ण राज्य में कुटुम्ब परामर्शी केन्द्र खोले जाएं ।

अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (ई. ओ.) अर्नाकुलम – धारा 498-क के अधीन मामले को दर्ज करने के साथ-साथ, पुलिस को मामले की जानकारी संरक्षण अधिकारी को देना चाहिए और घरेलू हिंसा अधिनियमों के अधीन न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन फाइल करवाना चाहिए जिससे कि न्यायिक पर्यवेक्षण के अधीन सुलह की संभावना का पता लगाया जा सके । मजिस्ट्रेट से अनुज्ञा पाने के पश्चात् ही गिरफ्तारी का सहारा लेना चाहिए । अपराध को जमानतीय नहीं बल्कि शमनीय बनाया जाए । धारा 498-क के अधीन मामलों का जायजा लेने के लिए जिला स्तर पर एलएसए और पुलिस थानों पर एस एच ओ को बीच नियमित बैठके होनी चाहिए ।

श्री थामस पल्लीकपैरामपिल, जिला न्यायाधीश, केरल – अपराध को जमानतीय नहीं बल्कि शमनीय बनाया जाना चाहिए । गिरफ्तारी के बिना पूछताछ आदर्श स्थिति होगी । एल एस ए को बेहतर और विस्तारी भूमिका समनुदेशित की जानी चाहिए । मुकदमा-पूर्व अदालत चलाई जाए । तथापि, एल एस ए को पुलिस थानों से समन्वय बनाने में बाधा नहीं डाली जानी चाहिए । सी डब्ल्यू सी में विशे-ा रूप से प्रशिक्षित वरि-ठ महिला पुलिस

अधिकारी की आवश्यकता है ।

श्री नरेन्द्र कुमार, जिला न्यायाधीश (कुटुम्ब न्यायालय), भिवानी – इसे जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने पर परिवारिक जीवन के इतिहास, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के मूल कारण पर आधारित निश्चित नि-कर्न निकाला जाए । महिला पुलिस अधिकारियों को उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए । महिलाओं को उपलब्ध संरक्षणात्मक दंड उपबंधों और सिविल अधिकारों को दिखाने हेतु टी.वी. चैनलों को आज्ञापक बनाकर जागरुकता फैलायी जाए ।

श्री आर. आर. गर्ग, जिला न्यायाधीश, करनाल – तत्काल गिरफ्तार न किया जाए । सर्वप्रथम मामला सुलह बोर्ड या परामर्श/मध्यस्थ को भेजा जाए । इसे अजमानतीय किन्तु शमनीय बना रहने दिया जाए । प्रिंट और इलेक्ट्रानिक मीडिया के माध्यम से जागरुकता फैलाने की आवश्यकता है । सी डब्ल्यू सी की अध्यक्षता एस पी रैंक की महिला पुलिस अधिकारी द्वारा की जाए ।

सुश्री रेंचकमों पी. कीकोन, डी आई जी आफ पुलिस, नागालैंड, कोहिमा – इसे अजमानतीय किन्तु शमनीय बना रहने दिया जाए । आरंभ में प्रारंभिक अन्वे-नण और सुलह/मध्यस्थता के उपाए किए जाएं । यदि प्रयास असफल रहता है तो मामला धारा 498-क के अधीन दर्ज किया जाए । महिला सेल की अध्यक्षता निरीक्षक पंक्ति की महिला अधिकारी द्वारा की जाए । एल एस ए को महिलाओं को शिक्षित करना चाहिए और जमीनी स्तर पर उनकी सहायता करनी चाहिए ।

आई. जी. आफ पुलिस – संघ राज्य क्षेत्र, चंडीगढ़ – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के पूर्व, सक्षम परामर्शदाताहओं की सहायता से सुलह प्रक्रिया अपनायी जानी चाहिए और अनापेक्षित गिरफ्तारी को बचाने के लिए संप्रेक्षक के रूप में कार्य करना चाहिए । 45 दिनों की समय सीमा का पालन इस प्रक्रिया में पहले ही अपनाया जा रहा है । अपराध को अजमानतीय किन्तु न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बना रहने दिया जाए । प्रत्येक जिले में सी डब्ल्यू सी स्थापित किया जाए जिसमें अनुभवी और सुप्रशिक्षित महिला पुलिस कर्मचारी रखे जाएं ।

श्री मंगेश कश्यप, डी सी पी (मुख्यालय), दिल्ली – निश्चित ही भा. दं. सं. की धारा 498-क की इसके अपमिश्रित रूप में आवश्यकता है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के पूर्व कुछ प्रक्रियागत सुधार किया जा सकता है । यह सुनिश्चित करने के लिए कि तथ्यों को बढ़ा-चढ़ाकर नहीं बताया गया है, व्यथित महिला से परामर्शदाताओं के साथ कुछ प्रतिक्रिया करने के पश्चात् आवेदन लिखने के लिए कहा जाना चाहिए । यदि परिवाद अतिशयोक्तिपूर्ण पाया जाता है तो संदेह को लाभ दिया जाना चाहिए । महिला और उसके बच्चे को ससुराल में रखने के लिए परामर्श और मध्यस्थता के माध्यम से सभी संभव प्रयास किया जाना चाहिए । इसे अजमानतीय बना रखने दिया जाए । धारा 498-क के अधीन दर्ज मामले में उपनिरीक्षक या इसके ऊपर की पंक्ति के अधिकारी द्वारा अन्वे-ण किया जाए । पक्ष में एक बार एसीपी और महीने में एकबार डीसीपी/एडीसीपी द्वारा नियमित रूप से पर्यवेक्षण किया जाए ।

श्री डी. वी. के राव, अवर सचिव, महिला और बाल विकास मंत्रालय, दिल्ली – परिवाद प्राप्त होने पर पुलिस को तत्काल प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करना चाहिए और मामले को अन्वे-ण करना चाहिए । तथापि, पति की तुरंत गिरफ्तारी का अवलंब तब तक नहीं लेना चाहिए जब तक क्रूरता का अभिकथित कार्य प्रथमदृ-ट्या बहुत गंभीर हो और ऐसी गिरफ्तारी की मांग हो । मध्यस्थ और परामर्श प्रक्रिया अपनायी जानी चाहिए किन्तु पुलिस को नातेदारों को गिरफ्तार करने से बचने का प्रयास करना चाहिए । इसे अजमानतीय और अशमनीय बना रहने दिया जाए । प्रथम उपाय के रूप में समुचित सुलह प्रयास किया जाना चाहिए । मध्यस्थता प्रशिक्षित वृत्तिकों द्वारा किया जाना चाहिए और दो मास में पूरी की जानी चाहिए । सुलह को सुकर बनाने में विधिक सेवा प्राधिकरणों को अधिक विस्तारी भूमिका निभानी चाहिए । प्रत्येक जिले में महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल स्थापित किया जाना चाहिए और ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बना होना चाहिए जो प्रशिक्षित हो और जो महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के मामलों से निपटने में संवेदनशील हों ।

श्री टी. पचाउ, आई जी आफ पुलिस, मणिपुर : यह अजमानतीय

बना रहे किन्तु न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाए । तत्काल गिरफ्तारी और पति और नातेदारों की अभिरक्षीय पूछताछ से बचा जाना चाहिए । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के दर्ज किए जाने के शीघ्र पश्चात् पीड़िता और अभियुक्त की परीक्षा करने की कार्रवाई की जाए । जिले का विधिक सेवा प्राधिकरण या वृत्तिक परामर्शदाता सुलह प्रक्रिया के लिए आदर्शतः उपयुक्त होंगे ।

उपाबंध -3ग

[रिपोर्ट के पैरा 10.1 को निर्दि-ट करें]

भा. दं. सं. की धारा 498-क की प्रश्नावली पर सरकारी कर्मचारियों के उत्तर

1. **सचिव, विधि विभाग, अंडमान और निकोबार प्रशासन, पोर्ट ब्लेयर**

सुसंगत साक्ष्य के बिना कोई तत्काल गिरफ्तारी नहीं और सुलह के प्रयास किए जाने चाहिए । अजमानतीय और शमनीय बनाया जाए । सौहार्द्रपूर्ण समाधान के लिए विधिक सेवा और पुलिस के बीच बेहतर समन्वय अपेक्षित है । सी डब्ल्यू सी को इसके तार्किक नि-कर्ा तक आरंभ से ही मामले की कार्यवाही करनी चाहिए ।

2. **निजी सचिव (विधि), हिमाचल प्रदेश सरकार**

नातेदारों और पड़ोसियों से उचित अन्वे-ण और जांच करने के पूर्व तत्काल कोई गिरफ्तारी न की जाए । इसे जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । सौहार्द्रपूर्ण समाधान के लिए विधिक सेवा और पुलिस के बीच बेहतर समन्वय अपेक्षित है । सी डब्ल्यू सी की कोई आवश्यकता नहीं है ।

3. **मेघालय सरकार (विधि विभाग)**

इसे **जमानतीय और शमनीय** बनाया जाए ।

4. **पश्चिमी बंगाल राज्य सरकार (विधि विभाग)**

उचित अन्वे-ण और नातेदारों और पड़ोसियों से जांच करने के पूर्व तत्काल गिरफ्तारी न की जाए । इसे जमानतीय और शमनीय बनाया जाए । सौहार्द्रपूर्ण समाधान के लिए विधिक सेवा और पुलिस के बीच बेहतर समन्वय अपेक्षित है । प्रत्येक जिले में सी डब्ल्यू सी गठित किया जाए जिसमें जिला न्यायाधीश, जिला समाज कल्याण अधिकारी और विनिर्दि-ट क्षेत्र में काम करने वाले महिला समाज कार्यकर्ता शामिल हो ।

5. **गृह सचिव, चंडीगढ़ प्रशासन**

तत्काल गिरफ्तारी न की जाए । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के पश्चात् आरंभतः नातेदारों और पड़ोसियों से प्रारंभिक अन्वे-ण किया जाए । इसे अजमानतीय और शमनीय बनाया जाए । एल एस ए और पुलिस को सौहार्द्रपूर्ण सुलह के लिए कार्य करना चाहिए । सी डब्ल्यू सी में महिला पुलिस अधिकारी होनी चाहिए जो घरेलू समस्याओं और परिवाद-पूर्व सलाह को निपटा सके । उन्हें आपराधिक विधियों के संशोधन और ऐसे मामलों में न्यायालयों के नवीनतम निर्णयों के बारे में समय-समय पर प्रशिक्षण दिया जाए ।

6. **विधि विभाग, त्रिपुरा**

भा. दं. सं. की धारा 498-क के दुरुपयोग को रोकने के लिए गिरफ्तारी और निरोध की प्रक्रिया का संशोधन कर "विशे-ा विधि" के रूप में दंड प्रक्रिया संहिता में धारा 154-क अंतस्थापित करें ।

7. **विधि विभग, गोवा सरकार**

न्यायालय की अनुज्ञा से इसे **शमनीय बनाया जाए । पति के साथ न रहने वाले नातेदारों के लिए ही इसे जमानतीय बनाया जाए । अन्यथा, इसे अजमानतीय बना रहने दिया जाए ।**

भा. दं. सं. की धारा 498-क के अधीन परिवाद प्राप्त होने पर पुलिस से यह पता लगाने की अपेक्षा है कि क्या परिवाद से प्रथमदृ-ट्या कोई मामला प्रतिबिम्बित होता है । तत्काल कोई गिरफ्तारी न की जाए किन्तु यदि अभिकथित अपराध गंभीर है, तभी तत्काल गिरफ्तारी की जाए और पति और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित उसके नातेदारों की अभिरक्षीय पूछताछ की जा सकती है । अन्वे-ण तीन मास में पूरा किया जाए । सर्वप्रथम पुलिस को पक्षकारों को "घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005" के अधीन नियुक्त समुचित प्राधिकारी द्वारा सुलह/समाधान के लिए भेजने के प्रयास करने चाहिए । सुलहकर्ता/मध्यस्थ या वृत्तिक सलाहकार (जो गैर-सरकारी संगठनों के भाग हो सकते हैं)

या मित्र या दो वैवाहिक पक्षकारों के परिचित श्रे-ठ व्यक्ति ; ऐसे महिला और पुरु-न अधिवक्ता जो ऐसे मामलों में स्वेच्छा से कार्य करते हैं या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण को सुलह/सलाह प्रक्रिया में आमंत्रित किया जा सकता है । एल एस ए और पुलिस थाने के बीच समन्वय की आवश्यकता है । ऐसे मामलों से अनन्य रूप से निपटने के लिए प्रत्येक जिले में पृथक् सी डब्ल्यू सी गठित करना वांछनीय है । महिला पुलिस सेल की अध्यक्षता महिला उपपुलिस अधीक्षक द्वारा की जाए ।

8. **गृह और अन्तर्राज्यीय सीमा विभाग, अरुणाचल प्रदेश सरकार, ईटानगर**

नियमित मामला दर्ज करने के पूर्व, प्रारंभिक जांच आज्ञापक होनी चाहिए जिसके दौरान दोनों पक्षों को सुना जाना चाहिए और मध्यस्थता और सुहल के प्रयास किए जाने चाहिए । इसे जमानतीय नहीं बनाया जाना चाहिए । मामले के दर्ज होने के पूर्व सलाह के माध्यम से सुलह पहला कदम होना चाहिए और सलाह प्रक्रिया के लिए 90 दिनों की समय सीमा की सिफारिश की गई है । इसे **अजमानतीय और अशमनीय** बना रहने दें । पुलिस थाने की अधिकारिता का अपवर्जन कर सी डब्ल्यू सी द्वारा अन्वे-ण उपयुक्त नहीं है ।

9. **मध्य प्रदेश सरकार**

अभियुक्त को गिरफ्तार करने के पूर्व, यथासंभव एक मास के समय के भीतर पहला कदम मध्यस्थता और समझौता होना चाहिए । मध्यस्थों में अनुभवी, सम्मानीय नागरिक या पुलिस अधिकारी भी शामिल किए जा सकते हैं । इसे **जमानतीय** बनाया जाए जिससे कि इसका दुरुपयोग न किया जा सके । पुलिस अधिकारी या सम्माननीय नागरिक अर्थात् गैर-सरकारी संगठनों की सहायता से एक मास के भीतर व्यथित पक्षकारों के बीच मामले के समझौते का प्रयास करना चाहिए ।

10. **उप विधिक परामर्शी, नागालैंड सरकार**

इस राज्य में दुरुपयोग नहीं हो रहा है अतः कोई टिप्पणी नहीं की जाती है ।

11. राज्यों के कुछ उत्तर (गृह मंत्रालय के पत्र के साथ संलग्न)

छत्तीसगढ़ : जमानतीय और न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाएगा ।

उत्तराखंड : जमानतीय, संज्ञेय और शमनीय

रा-ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली : न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के दर्ज करने के पूर्व प्रारंभिक जांच की जाए ।

चंडीगढ़ प्रशासन : जमानतीय, असंज्ञेय और शमनीय

राजस्थान : जमानतीय और शमनीय